संजय की कलम से ..

आध्यात्मिक प्रज्ञा

आध्यात्मिक प्रज्ञा हमारी बुद्धि की वह स्थिति, गुणवत्ता अथवा क्षमता है जिससे कि हम झट से किसी बात को ठीक से समझ लेते हैं, व्यक्ति को भाँप लेते हैं, परिस्थिति का अवलोकन कर सकते हैं और होने वाले परिणामों की झलक पा सकते हैं। इससे हमें वह योग्यता प्राप्त होती है जिससे हमारी मनोस्थिति एकरस बनी रहे और हम निन्दा-स्तुति, घृणा-द्वेष, हानि-लाभ, जय-पराजय और विघ्नों-तूफानों में रहते हुए भी एक निर्विघ्न तथा अचल स्थिति में रह सकें, ठीक निर्णय कर सकें, परिस्थिति का विश्लेषण कर सकें, मूल्यांकन कर सकें और आत्म-विश्वास से अपने इरादों का क्रियान्वयन कर सकें तथा अनेक प्रकार के प्रलोभन, उत्तेजनायें, उकसाहटें सामने आने पर भी हम अपनी नैतिकता में दृढ़ बने रहें। यह बुद्धि की प्रफुल्लित अवस्था है जिसमें दैवीगुणों का विकास हुआ होता है और मनुष्य भय, चिन्ता तथा दूसरों के दबावों में भी निर्द्वन्द्व होकर कार्यरत रहता है। ऐसी बुद्धि वाले व्यक्ति को नकारात्मक विचार नहीं आते और वह किसी का बुरा नहीं सोचता। वह कोरे स्वार्थ से ऊपर उठकर रहता है और भलाई के पथ पर मजबूत कदम से आगे बढ़ता है।

वह इस संसार में रहते भी इससे उपराम अथवा न्यारा होता है। **परमात्मा रूपी शमा पर वह पतंगे की तरह विचार-चक्र लगाता है। जैसे चकोर चाँद को देखकर बेतहाशा से ऊपर उसकी ओर उड़ जाता है, वैसे ही उसका चित्त रूपी चकोर उड़कर प्रभु की ओर जाता है।**

मनुष्य की यह स्थिति तब होती है जब वह इस स्मृति में स्थित होने का अभ्यास करता है कि मैं एक आत्मा हूँ, एक प्रकाश-कण हूँ, ज्योति-बिन्दु हूँ, अनादि हूँ, अनश्वर हूँ, शान्त हूँ, अपनी आदिम अवस्था में शुद्ध हूँ, परमपिता परमात्मा की अमर संतति हूँ और इस संसार रूपी कर्मक्षेत्र पर दूर देश, जिसे 'परलोक' अथवा 'ब्रह्मलोक' कहते हैं, से इस विश्व-नाटक में अपना पार्ट बजाने आया हूँ। मुझे यहाँ कार्य करना है और फिर वापिस लौट जाना है..। इस प्रकार राजयोग के अभ्यास से मनुष्य की बुद्धि ऋतम्भरा, कुशाग्र, एकाग्र, सांकुश, अनुशासित, दिव्य, विशाल एवं प्रफुल्लित होती है। दैवी सम्पदा वाली यह बुद्धि ही रूहानियत वाली बुद्धि (Spiritual Wisdom) है। हम शुद्ध आहार, व्यवहार, विहार, आचार और राजयोग का अभ्यास करते हुए इस मेधा, बुद्धि अथवा प्रज्ञा को प्राप्त करते हैं। ❖

अमृत-सूची

- मैं कौन? *(सम्पादकीय)*..... 4
- मम्मा सर्व दैवी गुणों से.....7
- पुरुषोत्तम संगमयुग और.....10
- 'पत्र' संपादक के नाम..... 13
- मानव और पेड़.....14
- मातेश्वरी की पवित्र गोदी.....16
- ग्लोबल हॉस्पिटल में 18
- शराब है खराब.....19
- मैंने बाबा को अपना बच्चा....21
- अमृतवेला: वरदानी वेला.....22
- डिप्रेशन: जानकारी और..... 25
- राजयोग ने किया कमाल.....27
- निश्चय है तो विजय है..... 29
- सचित्र सेवा समाचार..... 30
- एकान्त..... 32
- नये मेहमान को क्या दे.....34

इस वर्ष में
नये सदस्यता शुल्क

भारत	वार्षिक	आजीवन
ज्ञानामृत	80 /-	2,000/-
वर्ल्ड रिन्युअल	80/-	2,000/-
विदेश		
ज्ञानामृत	750 /-	8,000/-
वर्ल्ड रिन्युअल	750/-	8,000/-

शुल्क केवल '**ज्ञानामृत**' अथवा '**द वर्ल्ड रिन्युअल**' के नाम से ड्राफ्ट या मनीऑर्डर द्वारा भेजने हेतु पता है- संपादक, ओमशान्ति प्रिंटिंग प्रेस, ज्ञानामृत भवन, **शान्तिवन- 307510 (आबू रोड) राजस्थान।**

- शुल्क के लिए सम्पर्क करें - 09414006904, 09414154383

सम्पादकीय ..✍

मैं कौन?

आज का समाज समस्याओं से भरपूर है, कारण क्या है? यही कि हम पदार्थ का-सा जीवन जीते हैं, चेतना का-सा नहीं। हम प्रतिदिन दर्पण में चेहरा देखते हैं पर यह तो चमड़ी का चेहरा है, इसके अंदर है चेतना। यदि हम चमड़ी का जीवन जीते हैं तो यह पदार्थमय जीवन है और यदि आत्मा के स्वरूप को जानकर उसके अनुभवी बनकर जीते हैं तो यह चेतनामय जीवन है अर्थात् चेतन-सा जीवन है, नहीं तो जड़ शरीर की स्मृति से जीवन में भी जड़ता आती जा रही है।

आयु शरीर की होती है आत्मा की नहीं

हमारी जितनी आयु है, उसमें एक वर्ष जोड़कर अपने से पूछें कि इतने वर्ष पहले हम कहाँ थे? उत्तर स्पष्ट है। इतने वर्ष पहले यह शरीर तो था नहीं, इसका तो निर्माण ही नहीं हुआ था। पर शरीर के बनने से पहले भी हम (आत्मा) तो थे। दूसरे शरीर में, दूसरे स्थान पर। इसी प्रकार, अपनी आयु में 80 वर्ष जोड़कर पूछें, इतने वर्ष बाद हम कहाँ होंगे। निश्चित है कि यह शरीर तो तत्वों में विलीन हो जायेगा पर हम (आत्मा) अन्यत्र, अन्य शरीर में अवश्य होंगे। अत: आत्मा वो सत्ता है जो इस देह को धारण करने से पहले भी थी, बाद में भी रहेगी। यह जन्म-मरण से परे है। इसलिए आयु भी शरीर की होती है, अविनाशी आत्मा को आयु में नहीं बाँधा जा सकता।

सबसे बड़ा झूठ

एक बार किसी ने पूछा कि व्यापार में झूठ से कैसे बचा जाए, अगर व्यापार को ही छोड़ दें तो भी काम नहीं चलता। वास्तव में केवल व्यापार ही नहीं, अपने को देह समझने की छोटी-सी भूल के कारण आज हमारा सारा जीवन, सारा कार्यकलाप ही झूठ पर आधारित हो गया है। जब हम कहते, 'मैं योगाभ्यास कर रहा हूँ', 'मैं पढ़ रहा हूँ', 'मैं सेवा कर रहा हूँ' तब शरीर को ही कर्त्ता मानकर उसी को 'मैं' कहते हैं, इससे बड़ी भूल दूसरी हो ही नहीं सकती। पर जब कहते हैं, 'मेरे शरीर में पीड़ा है', 'मेरे सिर में भारीपन है' तो उसी शरीर को मेरा कह देते हैं। अब एक ही सत्ता 'मैं' और 'मेरा' दोनों कैसे हो सकती है? वास्तविकता यह है कि शरीर को मेरा कहने वाली सत्ता अदृश्य है। वह दिखती तो है नहीं इसलिए दृश्यमान शरीर के प्रति यह भ्रम हो जाता है कि यही बोल रहा है। पर जैसे चलती कार को देखकर हम कह देते हैं, कार आ रही है पर क्या कार अपने आप आती है, उसे लाता है उसका ड्राइवर। इसी प्रकार मुख क्या स्वत: बोलता है, उसको इस्तेमाल करती है आत्मा। अत: शरीर और इसके अंगों को मेरा कहने वाली, कर्त्ता, भोक्ता है आत्मा। आत्मा को भूलकर शरीर को 'मैं' मानना ही सबसे बड़ा असत्य है। इस असत्य से छूटते ही अन्य सभी असत्यों से भी छूट जायेंगे। **प्रकृति का बना शरीर प्रकृति की अमानत है। पुण्य कर्मों के लिए आत्मा का किराये का मकान है परन्तु इस पराई वस्तु में मेरापन रखना ही सर्व प्रकार के भ्रष्टाचार का जनक है। इसी कारण दुख है। इससे बचने का उपाय है, अपने को आत्मा समझ भगवान पर समर्पित हो जाना।**

इन्द्रियाँ अनेक, प्रयोगकर्त्ता एक

पाँचों इंद्रियों का प्रयोग करते समय हम 'मैं' शब्द का प्रयोग करते हैं जैसे मैं देखता हूँ, मैं सुनता हूँ, मैं बोलता हूँ, मैं छूता हूँ, मैं चलता हूँ। यह एक ही 'मैं' है जो आँख के, कान के, मुख के, हाथ के, पाँव के सभी कामों को कहता है, मैं करता हूँ। इसका अर्थ यह हुआ कि इंद्रियाँ अलग-अलग होते भी इनका प्रयोग

करने वाला यह 'मैं' अर्थात् आत्मा एक ही है जो मालिक बन कर्मेन्द्रियों से कर्म करती है।

प्रतिक्षण परिवर्तनशील है शरीर

आत्मा का रूप अपरिवर्तनशील है, बचपन में भी यही था, किशोरावस्था में भी यही था, वृद्धावस्था में भी यही है। शरीर तो क्षण-क्षण बदलता रहता है, हमारे देखते-देखते बदल रहा है। शरीर में परिवर्तन इतना सूक्ष्म होता है कि तत्काल दृष्टि पकड़ नहीं पाती। बहती नदी के किनारे खड़े होकर हमने जिस जल को देखा, वह तो बहते-बहते कहीं का कहीं चला गया पर हमें जल की धारा वहीं की वहीं दिखाई पड़ रही है परन्तु यह वही नहीं है। इसी प्रकार शरीर मात्र दिख रहा है कि वही है परन्तु यह वही नहीं है, जो कुछ क्षण पहले देखा गया था, इसके अणु-परमाणु बदल गये पर इस सूक्ष्म परिवर्तन को हम नहीं देख पाते। इस परिवर्तनशील शरीर को चलाने वाली आत्मा वही है, हाँ आत्मा की कलायें घटती-बढ़ती हैं इसलिए आत्मा का एक नाम 'सोम' भी है। सोम चंद्रमा को कहते हैं जिसकी भी कलायें घटती-बढ़ती हैं। जैसे चंद्रमा सोलह कला से अमावस्या और अमावस्या से फिर सोलह कला को प्राप्त होता है ऐसे ही आत्मा सतयुग में सोलह कला, त्रेता में चौदह कला, द्वापर में आठ कला और कलियुग में ज़ीरो कला हो जाती है। संगमयुग में ईश्वरीय ज्ञान द्वारा ज़ीरो कला से चढ़ते-चढ़ते फिर सोलह कला को प्राप्त हो जाती है।

झूठी काया की झूठी आँखें

कई लोग प्रश्न पूछते हैं कि आत्मा दिखाई तो देती नहीं है, कैसे मानें, कैसे अनुभव करें। वास्तव में आत्मा अधिभौतिक शक्ति (Metaphysical power) है। उस अलौकिक शक्ति को देखने की ताकत इन भौतिक आँखों में कहाँ? इन आँखों का पहुँच क्षेत्र (कवरेज एरिया) तो बहुत छोटा है। **जैसे व्यक्ति हाथ में टॉर्च लेकर चलता है ताकि रास्ते में दुर्घटना से बचा जा सके, इसी प्रकार, ये भौतिक आँखें भी टॉर्च भर का ही काम करती हैं। इनकी शक्ति सीमित है। वृद्धावस्था में, अंधेरे में, दूरी होने पर, पीठ पीछे का इन्हें दिखाई नहीं देता। अत: ये झूठी आँखें (False eyes) कही गई हैं। जब काया झूठी (विनाशी) है तो काया से लगी ये आँखें भी तो झूठी हैं जो अविनाशी सत्ता आत्मा को प्रत्यक्ष नहीं देख पातीं।**

अनुभूति ही सत्यता है

ये आँखें तो स्वयं को भी नहीं देख पाती। यदि पलकों पर कोई चिन्ह लग जाए या मिट्टी आदि लग जाए तो कोई दूसरा ही हमें बताता है या दर्पण का सहारा लेना पड़ता है। आँखों के आस-पास के क्षेत्र जैसे गालों पर या नाक पर भी कोई दाग-धब्बा किसी कारण लग जाये तो ये तो उसे भी नहीं देख पातीं। यहाँ भी किसी दूसरे की आँखों के सहयोग से या दर्पण के माध्यम से ये अपना काम चलाती हैं, तो फिर सच्ची आँखें (Real eyes) कौन-सी हैं? वास्तव में अनुभव करना (Realize) ही Real+ eyes हैं। कई बार कोई व्यक्ति चिकनी-चुपड़ी बातें करता है, आँखें और कान तो जड़ होकर सुन-देख लेते हैं परंतु भीतर आत्मा से प्रतिक्रिया आती है कि इसका विश्वास मत करो, यह अंदर एक, बाहर दूसरा है, तो देखिए, आत्मा ने देखा नहीं पर उसकी बातों में छिपी धोखेबाजी को अनुभव कर लिया। प्यार या नफरत, धोखा या विश्वास ये देखने की नहीं, अनुभव करने की बातें हैं। कई बार विगत या आगत की अनुभूतियाँ भी हो जाती हैं। आँखों की पहुँच से परे इन सत्यों का आभास किसे हुआ? अवश्य ही आत्मा को।

आत्मा स्वतन्त्र है

आत्मा स्वतंत्र है जबकि शरीर को बंधन में बाँधा जा सकता है। स्वतंत्र इस अर्थ में कि यह समय, स्थान आदि से पार जा सकती है।

हम जवान होते भी बाल्यकाल के क्षणों का आनन्द लेते हैं और वृद्धावस्था की योजना बनाते हैं। इस अवस्था में शरीर बदलकर न तो बच्चे जैसा और न ही वृद्ध जैसा बनेगा पर आत्मा अपनी स्मृतियों और दूरदर्शिता के बल से बीते हुए समय और आने वाले समय का अवलोकन कर सकती है। इसी प्रकार, शरीर जिस स्थान विशेष में है, वहाँ से दूर स्थान पर जाने में साधनों पर आधारित है और कई स्थानों पर तो वह साधनों के बल से भी नहीं जा सकता परंतु आत्मा तीनों लोकों और तीनों कालों में सहज ही भ्रमण कर लेती है। शरीर के एक स्थान पर रहते हुए भी ऊँचे से ऊँचे परमधाम की शान्ति की अनुभूति, सूक्ष्मवतन के सूक्ष्म फ़रिश्तों की अनुभूति कर सकती है। शरीर भले अशक्त भी हो जाये पर आत्मा में शरीर की हदों से पार की स्थितियों को अनुभव करने की शक्ति उसे और भी सशक्त बना देती है।

संत कबीर ने बहुत अच्छी बात कही है –

नव द्वारे का पिंजरा
तामे पक्षी पौन।
रहिबे का अचरज है
गए अचंबा कौन।।

भावार्थ यह है कि इस शरीर रूपी पिंजरे के नौ दरवाज़े हैं और सबके सब खुले हुए हैं। इस पिंजरे में आत्मा रूपी पंछी विराजमान है। अब दरवाज़े खुले होते भी यह आत्म-पंछी नहीं उड़ता तो यही आश्चर्य की बात है। यदि खुले दरवाज़ों से यह उड़ जाये तो कोई आश्चर्य नहीं। आत्मा रूपी पंछी के अंदर होने से ही आँखों में चमक है, हृदय में गति है और शरीर में हलचल है। आत्मा अति सूक्ष्म चिंगारी है, उसी के तेज से संपूर्ण शरीर आलोकित है।

आत्मा एक दिव्य शक्ति है

आत्मा को एनर्जी (शक्ति) कहा गया है। जैसे भारी-भरकम मशीन उठा देने वाली, चला देने वाली इलैक्ट्रिसिटी (बिजली) भी तो एनर्जी (शक्ति) ही है। इसी प्रकार शरीर चाहे 80 कि.ग्रा. का हो या 90 कि.ग्रा. का, अदृश्य सत्ता आत्मा के इसमें मौजूद रहने से यह सरलता से उठता, बैठता, चलता-फिरता और कर्मेन्द्रियों से सर्व कर्म करता है परंतु आत्मा के न होने से, इसके किसी अंग को चलाना, हिलाना असंभव हो जाता है। शक्ति का अर्थ है गति अथवा संचालन। शरीर को गति प्रदान करने वाली, इसकी क्रियाओं को सुचारु रूप से चलाने वाली आत्मा एक शक्ति ही है।

जड़ का प्रयोग चेतन करता है

जो लोग मानते हैं कि शरीर मात्र एक मशीन है, वे गहराई से सोचें कि कोई भी मशीन, दूसरी मशीन को जन्म नहीं दे सकती। हर जड़ चीज़ का प्रयोग कोई न कोई चेतन व्यक्ति करता है। जैसे मकान, कार आदि का उपभोग चेतन मानव करता है। प्रकृति भी जड़ है, वह स्वयं की वस्तुओं का उपभोग स्वयं नहीं करती। इसी प्रकार प्रकृतिकृत जड़ शरीर का प्रयोग भी चेतन आत्मा करती है। जैसे ड्राइवर के उतरते ही कार निष्क्रिय हो जाती है, उसी प्रकार आत्मा के शरीर से अलग होते ही शरीर निष्क्रिय हो जाता है।

एक बार महात्मा गांधी जी से पूछा गया कि आपके दुश्मन कौन-कौन हैं? उन्होंने कहा, मेरे लिए सबसे चुनौतीपूर्ण दुश्मन एक शख्स है जिसका नाम एम.के.गांधी है। गांधी जी की तरह ही, हम सबके सामने भी सबसे चुनौतीपूर्ण शख्स अपना 'मैंपन' ही है जिसे आत्मस्वरूप में टिककर ही जीता जा सकता है। *(क्रमशः)*

– ब्र.कु. आत्म प्रकाश

जैसे पंछी जमीन पर आता है दाना चुगने के लिए और फिर **आसमान में उड़ जाता** है, इसी प्रकार राजयोगी भी कार्य अर्थ देह **और देह की दुनिया की** स्मृति में आता है, कार्य पूरा होने पर वह भी **पाँच तत्वों से पार वतन में** उड़ जाता है और माया से सुरक्षित हो जाता है।

मम्मा सर्व दैवी गुणों से सम्पन्न थीं

• दादी जानकी

मम्मा को हम पहले से ही जानती थीं लेकिन जैसे कुमारका दादी (दादी प्रकाशमणि) की उनके साथ फ्रेंडशिप (मित्रता) थी, वैसे नहीं थी। वे दोनों उम्र में मेरे से छोटी थी। मम्मा बहुत एक्टिव (चुस्त) थी, वह हम लोगों से न्यारी थी। अन्य बहनों की भेंट में मम्मा बहुत चमकती हुई नज़र आती थी। ओम मंडली में आते ही उनका परिवर्तन देख सब को अच्छा भी लगा और आश्चर्य भी हुआ। जब मैं कराची में आयी तो किसी ने मेरे से पूछा, तुम ने मम्मा को देखा है? मम्मा से मिली हो? मैंने समझा कि बाबा की युगल जशोदा माता के लिए कहा होगा। मैंने कहा, मिल लूँगी लेकिन 2-3 दिन बाद पता पड़ा कि ये मम्मा किसको कहते हैं।

प्रेरित करती थी मम्मा की तपस्या

एक-दो साल में, मम्मा में जो परिवर्तन आया वो बहुत विचित्र बात थी। मम्मा के नयन, मम्मा के बोल, मम्मा का व्यक्तित्व – ये सब अलौकिकता में परिवर्तित हो गये थे। जब मम्मा ज्ञान सुनाती थी तो लगता था कि सिर्फ़, बाबा का सुनाया हुआ ज्ञान नहीं सुना रही है बल्कि उसको अपने में समाकर सुना रही है। मम्मा के कमरे के पास आँगन था। जब भी मैं मम्मा को देखती थी तो वह या तो छत पर या आँगन में कुर्सी पर बैठ बाबा से योग लगाते हुए दिखायी पड़ती थी। मम्मा को तपस्या करते हुए देख मुझे बहुत प्रेरणा मिलती थी।

मम्मा बहुत कम बात करती थी

मम्मा जब मुरली चलाती थी तो हम लोग ऐसे तन्मय होकर सुनते थे कि मूर्तिवत् हो जाते थे। मुरली डेढ़ घण्टा चलती थी तो हम भी एकाग्रता से बैठ सुनते थे। पूरे यज्ञ में देखा जाये तो मम्मा बहुत कम बात करती थी। मम्मा का यह गुण मुझे बहुत अच्छा लगता था। उस समय मैं भी बहुत कम बात करती थी। अन्तर्मुखता की यह प्रेरणा मैंने मम्मा से प्राप्त की। दूसरों के साथ बहुत कम सम्बन्ध रखती थी। कभी-कभी दीदी के साथ थोड़ा-बहुत बात करती थी। बातों-बातों में मैंने दीदी से यह कहा था कि मैं मम्मा से डरती हूँ, इसीलिए नहीं कि कोई ग़लती की थी लेकिन ऐसे ही उनके पास जाने में थोड़ी झिझक होती थी। यह मम्मा को मालूम पड़ा। एक दिन मम्मा ने मेरा हाथ पकड़ा और कहा, क्या जनक, तुम मेरे से डरती हो? मैंने कहा, डरती नहीं हूँ लेकिन कभी बात नहीं करती हूँ ना इसीलिए ऐसा कहा था। मम्मा ने कहा, चलो आज आपसे ज्ञान की रूहरिहान करेंगे। मम्मा

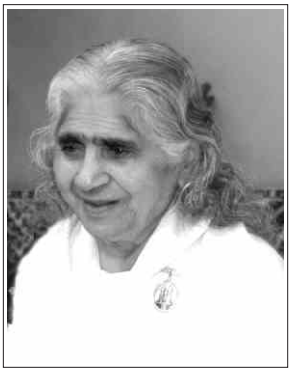

हरेक से इतने प्यार और रिगार्ड से बात करती थी कि सबका मन भर आता था।

मम्मा बोलकर नहीं, करके सिखाती थी

मम्मा कहती थी कि जो ग़लती एक बार कर दी वो दूसरी बार नहीं होनी चाहिए। मैंने यह गाँठ बाँध ली कि मैं मेरा रिकार्ड ऐसा रखूँ जो दुबारा मम्मा से शिक्षा लेनी न पड़े। मम्मा कभी भी कोई कार्य बोल कर नहीं सिखाती थी, ख़ुद करके सिखाती थी। एक बार हम सुबह चार बजे नहीं उठे थे। मम्मा चार बजे आकर देखती थी, कोई नहीं उठा तो वे धीरे-धीरे सीढ़ी उतरकर किचन में चली जाती थी। किसी-न-किसी को पता पड़ जाता था, तब वह कहती थी, मम्मा देख कर गयी। तो हम सब उठकर, तैयार होकर मम्मा के सामने जाकर खड़े हो जाते थे। तब मम्मा मुस्करा कर कहती थी, ''देखो, आपके

मंदिरों में भक्त उठकर घंटी बजा रहे हैं, आप देवता सोये पड़े हैं।'' तब से लेकर आज तक मैं अमृतवेले नहीं सोयी हूँ।

सदा 'जी बाबा', 'हाँ जी बाबा' कहा

भोजन क्या है, कैसा है – मम्मा यह कभी नहीं देखती थी। जो मिला उसी को प्यार से स्वीकार कर लेती थी। कभी यह नहीं कहा कि आज नमक कम है, ज़्यादा है, आज सब्जी अच्छी है, अच्छी नहीं है। खाने के समय मम्मा कभी इधर-उधर नहीं देखती थी। ऐसे चुपचाप बैठी, खाया और चली गयी। भोजन को प्रसाद के रूप में स्वीकार करती थी। मम्मा के सामने बाबा कुछ भी बात कहे, कुछ भी सुनाये, मम्मा कभी क्यों, कैसे – यह नहीं सोचती थी। सदा 'जी बाबा', 'हाँ जी बाबा' कहती थी। इतना रिगार्ड था उनका बाबा के प्रति। मैं जब पूना में थी तब मम्मा हमारे पास तीन बार आयी थी। बाबा के हर बोल पर मम्मा का अटूट विश्वास था। एक बार किसी ने मम्मा से पूछा, मम्मा, पहले बाबा कहते थे कि जहाँ जीत वहाँ जन्म। आजकल बाबा उसके बारे में कुछ बोलते नहीं, आपका क्या विचार है? तब मम्मा बोली, मेरा विचार कहाँ से आ गया? जो बाबा ने कहा है वही हम सबका विचार है। मम्मा ने कभी अपनी बुद्धि का अभिमान नहीं दिखाया।

मनजीत मम्मा

पूना में ही और एक बार किसी ने पूछा था, मम्मा, आप मन को कैसे शान्त रखती हैं? तब मम्मा ने कहा, यह मन तो हमारा छोटा बेबी है, मैं उसको कह देती हूँ कि अभी तुम शान्त रहो, जब ज़रूरत पड़ेगी तब मैं तुमको बुला लूँगी, वह चुप बैठ जाता है। ऐसे मम्मा मनजीत थी। कराची की बात है, मम्मा ऑफिस में बैठी थी तो मैंने जाकर पूछा, 'मम्मा, हम क्या पुरुषार्थ करें?' तब मम्मा ने कहा, 'सदैव समझो, यह मेरी अन्तिम घड़ी है।' वो दिन और आज का दिन, मम्मा का वो मंत्र मुझे भूला नहीं है कि हर घड़ी अन्तिम घड़ी है और मुझे बाबा की याद में रहना है।

पूना में मम्मा तथा दादी जानकी के साथ ब्राह्मण परिवार

गुप्तगामिनी सरस्वती माँ

मम्मा ने कभी अपना दिखावा नहीं किया। वह कितनी सेवा करती थी लेकिन कभी अपने मुँह से कहा ही नहीं कि मैंने इतनी सेवा की। मम्मा बैंगलोर में डेढ़ मास सेवा करके पूना आयी थी। उन्होंने बहुत सेवा की थी परन्तु कुछ नहीं सुनाया, जो भाई उनको लेने गया था उसी ने थोड़ा सुनाया था। तब हमने मम्मा से पूछा, तो उन्होंने कहा– सेवा अच्छी थी। इतना ही कहा, इससे ज़्यादा कुछ नहीं कहा। इस प्रकार, मम्मा अपने बारे में, किये हुए कार्य के बारे में कभी दूसरों को नहीं बताती थी। वे जितना त्यागी थी, उतना ही वैरागी थी और उतना ही तपस्वी थी। मम्मा को मैंने राधे के रूप में भी देखा, सरस्वती के रूप में भी देखा, काली के रूप में भी देखा और जगदम्बा के रूप में भी देखा।

शिक्षा देने की गज़ब की विधि

बाबा, सभा में अर्थात् क्लास में सभी के सामने ही समझानी देते थे। किसी को व्यक्तिगत रूप में शिक्षा देनी होती तो उनको पत्र लिख देते लेकिन मम्मा का समझाने का तरीक़ा अलग था। मम्मा उस वत्स के कानों में कह देती थी अथवा इशारा कर देती थी और बहुत प्यार से कहती थी। ऐसे नहीं कि किसी की सुनी-सुनायी बातों के आधार पर मम्मा उसको शिक्षा देती थी। मम्मा समय देकर, उसको प्यार से समझाती थी और गज़ब की बात

यह होती थी कि मम्मा उस व्यक्ति को भी महसूस नहीं होने देती थी कि मम्मा मुझे किसी के कहे अनुसार शिक्षा दे रही है। मम्मा की शिक्षा को हरेक यज्ञवत्स अपनी माँ की ही शिक्षा समझकर लेता था। हरेक को लगता था कि मम्मा जो भी हमें कह रही है, हमारी भलाई के लिए। बाबा की शिक्षा बहुत शक्तिशाली होती थी, कारण कि उसको सुनने और समझने की शक्ति चाहिए। शक्तिशाली आत्मा ही बाबा की शिक्षा हज़म कर पाती थी। इस कारण, आमतौर पर किसी बच्चे को समझाना होता तो बाबा सीधा उस बच्चे को नहीं बोलते थे लेकिन उसके सामने ही मम्मा को कहते थे तो वह समझ लेता था कि मेरे कारण मम्मा को इतनी सारी बातें सुननी पड़ीं। फिर वही मम्मा से अपनी ग़लती क़बूल करता था और आगे के लिए ध्यान रखता था।

सभ्यता और अनुशासन की जननी

मम्मा ने कभी बाबा को साधारण समझा ही नहीं। बाबा की हर बात को पूर्णत: सम्मान दिया और उसका पूरा परिपालन किया। कई बच्चे, बाबा की बात को बहुत साधारण रूप में लेते थे, तो मम्मा सब बच्चों को बिठाकर समझाती थी कि बाबा को साधारण समझने की कड़ी भूल कभी नहीं करना। बाबा का एक-एक बोल बहुत मूल्यवान है। ऐसे कह कर हमें सभ्यता और अनुशासन सिखाती थी। मम्मा का बोलने का तरीक़ा बहुत सम्मान, प्यार और मिठास वाला होता था। हमें मम्मा ने रीति-रिवाज, सभ्यता-संस्कृति सिखाकर लायक बनाया और हम बच्चों का गुणों से शृंगार कर बाप के सामने रखा।

यज्ञमाता के रूप में विशेषताएँ

मम्मा को मैंने जब से देखा तब से उनमें, श्री लक्ष्मी के सब लक्षण स्पष्ट रूप में दिखायी पड़ते थे। मम्मा सर्व दैवीगुणों से सम्पन्न थी। मम्मा को देह से न्यारी होने के अभ्यास पर बहुत ध्यान रहता था। अशरीरी बनने का जो अभ्यास मम्मा का था वो हम सब के सीखने लायक था। मम्मा के सामने कोई भी आता था कुछ बात करने के लिए, तो उसकी आवाज़ ही बन्द हो जाती थी अथवा ज़्यादा बोल नहीं पाता था। प्यूरिटी की पर्सनैलिटी, रॉयल्टी, त्याग, फ़र्ज़-अदाई में सदा नम्बरवन थी। इतनी छोटी आयु में इतना बड़ा परिवर्तन अपने में कर लेना–यह बहुत बड़ी विशेषता थी। मम्मा ने, बाबा की वफ़ादार बेटी का और हम सब यज्ञवत्सों की अलौकिक माँ का–दोनों पार्ट बजाये। मम्मा के मुख से जो वाक्य निकलते थे, राय-सलाह निकलती थी, सुनने वालों के लिए वे सब वरदान बन गये। सबको अनुभव होता था कि इनमें मम्मा का कोई स्वार्थ नहीं, वो तो हमारी भलाई के लिए ही इतनी मेहनत कर रही है। मम्मा को, दादा-परदादा की आयु वाले भी माँ कहते थे, अपना हित-चिन्तक समझते थे।

मम्मा का रूहानी रूप

मम्मा रोज़ मुरली ज़रूर पढ़ती थी अथवा टेप द्वारा सुनती थी। भले ही रात के 11 बजे हों लेकिन कल की मुरली सुनकर ही मम्मा सोती थी। जितनी अपने कर्त्तव्य पर पक्की रही उतनी ही ईश्वरीय पढ़ाई पर भी पक्की रही। हॉस्पिटल में भी मम्मा रोज़ मुरली सुनती थी। हमने मम्मा को सदा अलर्ट और एक्यूरेट (Alert and accurate) देखा। हमने कभी भी मम्मा की आँखें थकी हुई नहीं देखी। सदा उनके नयन बाबा की याद में मगन देखे। मम्मा में नम्रता इतनी थी कि जब बाबा कहते थे – 'मात-पिता का याद-प्यार और नमस्ते', तब मम्मा अपने को माता नहीं समझती थी। ऊपर इशारा करते कहती थी कि उस मात-पिता का याद और प्यार है। मम्मा केवल ज़िम्मेवारी निभाने में, पालना देने में अपने को माता समझती थी। मम्मा ने माँ का पद स्वीकार नहीं किया परन्तु माँ का कर्त्तव्य स्वीकार कर उसको पूर्णरूपेण निभाया। बाबा के सामने वह एक छोटी, नन्ही-सी बच्ची का रूप धारण कर लेती थी और यज्ञवत्स और भक्तों के सामने आदिदेवी जगदम्बा माँ का रूप धारण कर लेती थी। इतनी महान् थी हमारी माँ सरस्वती! ❖

पुरुषोत्तम संगमयुग और ड्रामा का ज्ञान

• ब्रह्माकुमार रमेश शाह, गामदेवी (मुंबई)

परमपिता परमात्मा शिव, परमशिक्षक और परमसतगुरु हैं। परमशिक्षक के रूप में सृष्टि के आदि, मध्य, अंत के इतिहास, भूगोल का ज्ञान देते हैं। भूगोल के द्वारा तीन लोक अर्थात् परमधाम का ज्ञान मिलता है जहाँ से हम आत्मायें इस सृष्टि रूपी रंगमंच पर अपना पार्ट बजाने आते हैं और फिर वापस जाते हैं। बीच में जो सूक्ष्म वतन है, उसका भी ज्ञान मिलता है। परमधाम शब्द गीता में भी है। जब हमने शिवबाबा के ज्ञान में परमधाम अर्थात् ब्रह्मलोक का ज्ञान सुना तब सोच चला कि गीता के 15वें अध्याय में आये हुए परमधाम शब्द का वास्तविक अर्थ क्या है। विभिन्न धर्माचार्यों तथा पंडित, विद्वानों ने 15वें अध्याय के परमधाम शब्द का जो अर्थ लिखा है, उनमें से किसी ने भी, परमधाम हम आत्माओं का स्वदेश है, यह बात नहीं लिखी है।

इसी प्रकार, इतिहास द्वारा अनेक नई बातें शिव पिता ने हम बच्चों को सिखाई हैं। शेक्सपियर ने लिखा है कि यह सृष्टि रंगमंच है और हम सब उसमें पार्टधारी (Actors) हैं, यह बात हमने पढ़ी थी। एक ग्रीक दार्शनिक ने लिखा है कि सृष्टि चक्र हर 10,000 वर्ष के बाद हूबहू पुनरावृत्त होता है। इसी प्रकार से कई अन्य विद्वानों ने भी लिखा है कि कल्प में सृष्टि का इतिहास पुनरावृत्ति को प्राप्त करता है परंतु उनकी मान्यता और शिवबाबा द्वारा बताये गए ज्ञान में जमीन-आसमान का फर्क है। मिसाल के तौर पर, मैंने एक विद्वान से पूछा कि हर कल्प में रामायण और महाभारत होता है क्या? तो कहा, होता है। हमने पूछा, फिर रामायण के विभिन्न ग्रंथों में, विभिन्न प्रकार के प्रसंग क्यों हैं? उस विद्वान ने कहा, रामायण और महाभारत तो वही हैं परंतु रामायण के लेखकों को कोई बात अच्छी लगी, कोई नहीं लगी, उस आधार पर और कई बातें उस समय के समाज के मार्गदर्शन के लिए अनिवार्य समझकर ग्रंथों में शामिल कर ली गई हैं।

उन्हीं पंडित लोगों को जब हमने शिवबाबा के ड्रामा के हूबहू पुनरावर्तन का ज्ञान सुनाया तो वे विचलित हो गये और कहने लगे कि फिर पुरुषार्थ हम क्यों करें? मैं उन्हें शिवबाबा के ज्ञान के आधार पर कहता था कि ड्रामा में हमारा पार्ट क्या है, वो हमें मालूम नहीं है और हम सोचते हैं कि हमारा पार्ट श्रेष्ठ से श्रेष्ठ होगा इसलिए श्रेष्ठ प्रालब्ध बनाने के लिए श्रेष्ठ कर्म हम करते हैं। मैं उन्हें स्थूल मिसाल बताता था कि कार में एक ही पैर से गति बढ़ाने या ब्रेक लगाने का कार्य होता है। कुशल ड्राइवर ही समझ सकता है कि कब ब्रेक लगाना है और कब एक्सीलरेटर दबाना है।

ड्रामा के ज्ञान से पुरुषार्थ में तीव्रता लाने के लिए मुझे ब्रह्मा बाबा ने बहुत अच्छी युक्ति सिखाई थी। एक बार जब मैं और दादी प्रकाशमणि मुंबई से मधुबन आये थे तो ब्रह्मा बाबा ने वर्ल्ड रिन्यूअल स्प्रिच्युअल ट्रस्ट का निर्माण करने के लिए हम चार लोगों (बड़ी दीदी, दादी प्रकाशमणि, दादा आनन्द किशोर और मैं) की कमेटी बनाई। आखिर में फिर यह प्रश्न निकला कि ट्रस्ट का मैनेजिंग ट्रस्टी कौन बने। सबने कहा कि रमेश भाई बने। मैंने ब्रह्मा बाबा को कहा कि मुझे ट्रस्ट के कारोबार का अनुभव नहीं है, मैं तो इन्कम टैक्स का वकील हूँ, मुझे उसी का अनुभव है इसलिए अन्य किसी अनुभवी आत्मा को मैनेजिंग ट्रस्टी बनाया जाये, मैं उस आत्मा की कानूनी दृष्टिकोण से सहायता करूँगा। तब ब्रह्मा बाबा ने कहा, नहीं बच्चे, कल्प पहले भी तुम मैनेजिंग ट्रस्टी बने थे, अब भी बनना है और हर कल्प तुम्हें ही बनना होगा। मैंने फिर से तर्क किया कि मुझे अनुभव नहीं है तो मैं कैसे कार्य करूँ, तो बाबा ने ड्रामा के ज्ञान को सदुपयोग करने

की सरल युक्ति बताई कि जब भी किसी बात का निर्णय करने में दुविधा उत्पन्न हो तब दो मिनट बाप की याद में बैठ जाना और कल्प पहले की अपनी स्मृति को, कल की स्मृति समझ याद करना, इस स्मृति से आप अच्छे से अच्छे निर्णय ट्रस्ट के कारोबार के लिए कर सकेंगे। मेरा तो अनुभव यही है कि 1969 से, करीब 40 वर्षों से ट्रस्ट के कारोबार में उसी कल्प पहले की स्मृति के बल से मुझे प्यारे बापदादा की मदद मिलती रही और जो भी निर्णय हुआ, वह निर्विघ्न रूप से सफल हुआ।

उत्तर प्रदेश के हापुड़ सेवाकेन्द्र पर जब समस्यायें उत्पन्न हुईं और आदरणीया मातेश्वरी जी वहाँ चक्कर लगाकर मधुबन आई, तब मातेश्वरी जी से समाचार सुनकर, प्यारे ब्रह्मा बाबा से मैंने पूछा, बाबा, आपको ऐसे समाचार सुनकर चिन्तन नहीं चलता है, आप ऐसी परिस्थिति में कैसे अपनी अवस्था को एकरस रखते हैं? तब प्यारे ब्रह्मा बाबा ने कहा कि हमको पूर्ण निश्चय है कि पाँच हज़ार वर्ष पहले भी स्थापना के समय ऐसी समस्यायें आई थीं और फिर भी स्थापना हुई थी। जैसे कल्प पहले हमने विजय प्राप्त की थी, वैसे अभी भी करने वाले ही हैं। इस प्रकार ड्रामा की हूबहू पुनरावृत्ति और शिवबाबा की मदद पर पूरा निश्चय होने के कारण मेरी स्थिति में कोई अंतर नहीं पड़ता है। बाबा की बात सुनकर मुझे भी निश्चय हुआ और पाया कि इससे हर समस्या सूली से कांटा हो जाती है।

मुंबई में मेरे एक मित्र के पास एक ज़मीन का टुकड़ा था जिसे वह 35,000 रुपये में बेच रहा था। उस समय मातेश्वरी जी मुंबई में हमारे घर में रह रहे थे। हमने मम्मा को कहा कि यह प्लॉट हम यज्ञ सेवा के लिए खरीद लें तो मातेश्वरी जी ने मना किया। करीब चार मास बाद, जिसने वह प्लॉट 35,000 रुपये में खरीदा, उसने अन्य व्यक्ति को 70,000 रुपये में बेच दिया। तब मैंने मातेश्वरी को कहा, यह प्लॉट यज्ञ के लिए या मुझे अपने लिए खरीदने की छुट्टी मिलती तो कितना अच्छा होता! ऐसा मैंने दो-तीन बार रात्रि को डाइनिंग टेबल पर हँसी-हँसी में कहा, तब मातेश्वरी ने कहा, रमेश, जो बात ड्रामा में नहीं है, उसका चिंतन करने से क्या फायदा, ड्रामा में ही नहीं था इसलिए हमने आपको छुट्टी नहीं दी, इसमें ही कल्याण है। ड्रामा की भावी को कल्याणकारी समझकर व्यवहार करोगे तो व्यर्थ चिंतन या दिलशिकस्तपने की बातें नहीं आयेंगी।

आदरणीया हृदयमोहिनी दादी जब रशिया में थे तब एक आत्मा ने उनसे पूछा, आप समस्याओं का सामना कैसे करते हैं? दादी जी ने बहुत अच्छा जवाब दिया, हम समस्या को, समस्या नहीं बल्कि परीक्षा समझते हैं और एक होशियार विद्यार्थी परीक्षा से डरता नहीं है। वो जानता है कि परीक्षा ऊपर के दर्जे में ले जाने का साधन है। अत: हमारे लिए भी परीक्षा आगे बढ़ने की अर्थात् सफलता की चाबी है।

ड्रामा के ज्ञान के आधार पर अगर/मगर तथा जो/तो की भाषा और उसके आधार पर उत्पन्न होने वाला चिंतन समाप्त हो जाता है। शास्त्रों में 'अगर/मगर' तथा 'जो/तो' के संबंध में अनेक बातें लिखी हैं जैसे कि अगर सीता ने लक्ष्मण रेखा पार न की होती तो रामायण में क्या होता और बाली का वध करने के बदले राम ने अगर उसे अपना मित्र बनाया होता तो लंका कांड न होता। अगर युधिष्ठिर जुआ खेलने न गये होते तो महाभारत युद्ध की ज़रूरत न पड़ती। कुंती माता ने कर्ण के जन्म की कहानी पहले सबको बताई होती तो कर्ण ज्येष्ठ कुंती पुत्र होने के नाते से युद्ध में पांडवों के पक्ष में होता और महाभारत के युद्ध का परिणाम कुछ और होता।

वर्तमान इतिहास में भी 'अगर/मगर' या 'जो/तो' के बारे में अनेक प्रश्न हैं। इतिहासकार लिखते हैं कि नेपोलियन ने वाटरलू के युद्ध में, आस्ट्रिया की सेना लॉर्ड वेलिंग्टन के पास नहीं पहुँची, ऐसा समझकर अपनी 1/3 सेना पूर्व में भेज दी और दूसरे दिन उसने लॉर्ड वेलिंग्टन की सेना के साथ युद्ध किया। आस्ट्रिया की सेना

तो वाटरलू युद्धभूमि पर पहुँच चुकी थी और नेपोलियन की सेना तो पहले ही 1/3 कम थी इसलिए वाटरलू के युद्ध में वह हार गया। इतिहासकार कहते हैं कि नेपोलियन ने अगर यह भूल न की होती तो विश्व का इतिहास कुछ और होता। उसी तरह द्वितीय विश्वयुद्ध के प्रारंभ के समय भी चैम्बरलिन (उस समय के इंग्लैण्ड के प्रधानमंत्री) ने युक्ति से विंस्टन चर्चिल (उस समय के इंग्लैण्ड के विदेश मंत्री) को रशिया भेजा और मृग-मरीचिका जैसा आभास निर्मित किया कि हिटलर अगर इंग्लैण्ड के साथ युद्ध करेगा तो रशिया पीछे से हमला करके जर्मनी को जीत लेगा और इसीलिए हिटलर ने इंग्लैण्ड को छोड़ रशिया पर आक्रमण किया। रशिया की ठंडी से उसकी सेना कमजोर हो गई। इसलिए इतिहासकार कहते हैं कि हिटलर ने अगर रशिया पर आक्रमण नहीं किया होता और इंग्लैण्ड के साथ युद्ध किया होता तो विश्व का इतिहास कुछ अलग होता।

ऐसा ही एक प्रश्न महात्मा गांधी और मोहम्मद अली जिन्ना के संबंध में भी आलोचक उठाते हैं। भ्राता मोहम्मद अली जिन्ना के दादा प्रेमजी भाई ठक्कर हिन्दू लोहाना जाति के थे और राजकोट के नज़दीक गोंडल शहर के रहने वाले थे। आजीविका अर्थ वो राजकोट गये और वहाँ मछलियों को एक्सपोर्ट करने वाले एक मुसलमान व्यापारी के पास मुनीम का काम शुरू किया और उनका विश्वास जीत लिया। सेठ को खतरनाक बीमारी हो गई, परिणामस्वरूप उसने प्रेमजी भाई ठक्कर को, अपने बच्चे बड़े होने तक धंधे को संभालने की जिम्मेवारी दे दी और प्रेमजी भाई ने धंधा संभाल लिया जिस पर उनकी लुहाना जाति की प्रबंधन समिति ने उन्हें जाति से निष्कासित कर दिया। प्रेमजी भाई के प्रायश्चित को भी स्वीकार नहीं किया गया। उनके चार पुत्र थे। उनकी शादी के लिए उन्हें मजबूरी में मुसलमान धर्म स्वीकार करना पड़ा। उसका एक पुत्र जिन्ना था और उसका ही बेटा मोहम्मद अली था जिस मोहम्मद अली के पुरुषार्थ के आधार पर पाकिस्तान की रचना हुई और हिन्दुस्तान का भविष्य का नक्शा बदल गया। तब प्रश्न उठता है कि अगर प्रेमजी भाई के प्रायश्चित के प्रस्ताव को उनकी जाति ने स्वीकार कर लिया होता तो पाकिस्तान की रचना नहीं होती।

इसकी भेंट में महात्मा गांधी का मिसाल है। महात्मा गांधी जी मोहनदास गांधी के रूप में लंदन में बैरिस्टरी की पढ़ाई के लिए गये। वे मोढ़ बनिया थे। उनकी जाति ने भी विदेश यात्रा के लिए दंड देने का प्रस्ताव रखा। महात्मा गांधी राजकोट गये, प्रायश्चित रूप में यज्ञ आदि किया और वे हिंदू के हिंदू ही रह गये। अगर गांधी जी के भी प्रायश्चित के प्रस्ताव को उनकी जाति के बड़े स्वीकार न करते तो गांधी जी को भी मुसलमान बनना पड़ता और हिन्दुस्तान का इतिहास कुछ और होता।

इतिहासकारों तथा शास्त्रज्ञों के पास ड्रामा का ज्ञान न होने के कारण वे मूँझते हैं और लोगों की बुद्धि को उलझन में डालते हैं। इंग्लैण्ड के दो लेखकों ने भारत के इतिहास के बारे में बताया है कि मोहम्मद अली जिन्ना को कैंसर की बीमारी थी इसलिए वो फोर्स करता था कि जल्दी से भारत का विभाजन हो, पाकिस्तान की रचना हो। अगर हिंदुस्तान के उस समय के नेतागण को इसकी बीमारी का ज्ञान होता तो वे विभाजन के प्रस्ताव को स्थगित कर देते, तो भारत और पाकिस्तान का इतिहास कुछ और होता।

शिवबाबा के ड्रामा के ज्ञान के आधार पर हम आत्माओं की इस प्रकार की अनेक उलझनें मिट गई हैं और उसका सही उपयोग करके पुरुषार्थ में तीव्रता ला सकते हैं। मेरा दैवी परिवार के सभी सदस्यों से निवेदन है कि शिवबाबा के सिखाये गये ड्रामा के ज्ञान को सही स्वरूप में समझें तो हमारे पुरुषार्थ में तीव्रता आ सकती है और हम श्रेष्ठ पद प्राप्त कर सकते हैं। ❖

'पत्र' संपादक के नाम

फरवरी 2010 का अंक पढ़ने के बाद जीवन को पलट देने वाला एक सुखद अनुभव हुआ। बहुत दिनों से विचार उठता था कि योग कैसे करें, क्या आँखें बंद करके योग करना गलत है? दिव्य बुद्धि के वरदान से विभूषित आदरणीया दादी जानकी जी ने 'प्रश्न हमारे, उत्तर आपके' में कहा, योग आँखें बंद करके करो या आँखें खुली करके। आँखें बंद करने से नींद आने की संभावना है। नेचुरल योगी बनने के लिए खुली आँखों से, देखते हुए भी मत देखो। योग का अर्थ है, बुरी बातें न सुननी हैं, न देखनी हैं, न बोलनी हैं, तो अपने आप योगी बन जायेंगे। किसके नाम, रूप से हमारा कोई प्रयोजन नहीं है। हमारा काम है, आत्मा को देखना। आँखें बंद करेंगे तो भी आत्मा (तीसरे नेत्र) से ही देखेंगे और आँखें खुली रखेंगे तो भी आत्मा (तीसरे नेत्र) से ही देखेंगे। यह पढ़कर दिल में बहुत खुशी हुई।

– त्र्यंबक.द.मामीडवार,
सिडको नांदेड

मार्च अंक में प्रकाशित 'प्रश्न हमारे, उत्तर आपके' स्तंभ में दादी जी ने बताया कि मनुष्य देह अभिमान में आकर, स्वयं को भूलकर, भगवान को भी भूल जाता है। इससे बुद्धि काम नहीं करती, फिर अशुद्ध कर्म होने लगते हैं। तो क्यों न देही-अभिमानी रहें और श्रेष्ठ कर्म करें जिससे आगे चलके हमें पछताना न पड़े। आशा है, इसे पढ़ने से भाई-बहनों का चिन्तन अवश्य ही बदल जायेगा और बुरे कर्म से श्रेष्ठ कर्म की ओर आगे बढ़ेंगे। दादी जी को सहृदय धन्यवाद और नमस्ते!

– ब्र.कु.रवि कुमार ध्रुव,
गंडई-राजनांदगांव

मार्च 2010 का संपादकीय लेख 'आसक्ति और प्रभाव' पढ़कर बहुत ही अच्छा लगा। 'स्वर्ग का द्वार है नारी' लेख में नारी शक्ति का महत्त्व बातकर उन्हें आगे आने एवं ईश्वरीय कार्य में शिवबाबा का सहयोगी बनने के लिए प्रेरित किया गया है। इस प्रकार से ज्ञानामृत सभी आत्माओं को समर्थ बनाने की सेवा कर रही है।

– गजेन्द्र कुमार,
देवरी, भाटापारा (छ.ग.)

मार्च 2010 के अंक में 'नारी की आध्यात्मिक श्रेष्ठता' के साथ 'आसक्ति और प्रभाव' लेख के माध्यम से आसक्ति को जिस प्रकार परिभाषित किया गया है, वह अति सुन्दर है। प्रभाव को भी उबलते पानी का उदाहरण देकर समझाया गया है। मन एवं शरीर की ताजगी हेतु, लाइट रिफ्रेशमेन्ट की तरह निरंतर परमात्मा का चिन्तन होता रहे। प्रति घंटे कुछ क्षण के लिए परमात्मा का ध्यान करके उसे ही अपना संपूर्ण कर्म समर्पित करते रहा जाये। आदर्श जीवन जीने हेतु परमात्म चिन्तन अनिवार्य हो जाता है, उसका अभ्यास सूक्ष्मता से करना जीवन का लक्ष्य बनाना अनिवार्य है।

– वंशलाल सचान,
जहानाबाद-फतेहपुर

मार्च माह के अंक में 'आसक्ति और प्रभाव' संपादकीय पढ़कर मन पर लगे सारे घाव भर गये एवं सही मायने में पता पड़ा कि ना चाहते भी प्रभाव का आ जाना आत्मा की कमज़ोरी के कारण होता है एवं जहाँ आसक्ति है वहाँ शक्ति नष्ट हो जाती है। लेख बहुत ज्ञानवर्धक एवं अनेक राज़ों की गुत्थी सुलझाने वाला है। संपादकीय लेख पढ़कर ऐसा लगता है जैसे कोई पिता उंगली पकड़कर छोटे बच्चे को चलना सिखा रहा है और वह बच्चा उस रास्ते को समझकर आगे की ओर कदम पर कदम बढ़ाता जाता है। आपका तहेदिल से धन्यवाद!

– ब्र.कु. मंजू, धामनोद

ज्ञानामृत पत्रिका में बड़े भावपूर्ण लेख प्रकाशित होते हैं। अप्रैल 2010 के अंक में 'ऐसे मिली जीवन को नई दिशा', 'स्वर्ग का द्वार है नारी' और 'पहाड़ जैसा दुख भूल गई' आदि लेख बड़े अनूठे हैं। दादी जानकी जी का लेख 'प्रश्न हमारे, उत्तर आपके' का तो कहना ही क्या!

– कमला राही, अजमेर

पर्यावरण दिवस पर विशेष..

मानव और पेड़

• ब्रह्माकुमार उर्मिला, शान्तिवन

मेरे कार्यालय के बाहर एक नन्हा पौधा रोपा गया। मैं रोज आते-जाते उस पर नज़र डालती, उसकी वृद्धि को देख प्रसन्न होती। देखते ही देखते पौधा बड़े पेड़ में रूपांतरित हो गया और मेरी ऊँचाई को भी पार कर गया। पत्तों से भरी उसकी शाखायें छत्ते की तरह फैल गई और आते-जाते राहगीरों को आकर्षित करने लगी। पास में सड़क पर काम करने वाले मजदूर भाइयों ने उसके नीचे साइकिलें खड़ी करनी शुरू कर दी। उनके बच्चों ने वहाँ खेलना और कभी-कभार बैठकर खाना-पीना भी प्रारंभ कर दिया। इस प्रकार चार वर्ष का होते-होते पेड़ ने परोपकार करना प्रारंभ कर दिया। दिन बीतने के साथ-साथ यह परोपकार बढ़ता गया। जब उस पर फूल खिले तो लोग उन्हें देख-देखकर आनंदित होने लगे और कोई-कोई विशेष अवसरों पर उसकी झुकी डालियों के फूल तोड़ने लगे जिसका पेड़ ने कभी एतराज नहीं किया।

यह सब देख मन में एक प्रश्न उठा कि मात्र चार वर्ष का यह पेड़ कितनी सेवा करता है, कितनों की दुआयें अर्जित करता है, कितना सुख देता है। क्या इस आयु का मानव भी इतनी सेवा कर सकता है? उत्तर मिला, इस आयु का अबोध बालक दूसरे की सेवा तो क्या करेगा, अपनी सेवा के लिए भी दूसरों पर आश्रित रहता है। कितने ही वर्षों तक, समाज के कितने ही मनुष्यों का समय, धन और शक्ति लगवाकर वह कुछ देने लायक बनता है लेकिन आजकल तो यह भी निश्चित नहीं है कि इतना कुछ लेकर वह देने लायक बन भी जायेगा। कई बार तो वह समाज की सारी अपेक्षाओं को धूल-धूसरित भी कर देता है। और फिर एक प्रश्न यह भी है कि कौन, किसके बिना अपना अस्तित्व बनाये रखने में समर्थ है? इस पौधे को तो किसी मानव ने रोपा लेकिन मानव न भी रोपे तो भी पेड़ जन्म ले लेगा, वृद्धि को प्राप्त हो जायेगा, फूलेगा भी और फलेगा भी पर सोचिये, यदि एक भी पेड़ ना हो तो क्या मानव जीवन संभव है? कौन बड़ा? मानव या पेड़? पेड़, मानव के बिना जिंदा रह सकता है लेकिन मानव, पेड़ के बिना नहीं।

मनुष्य को तो रहने के लिए बड़ा-बड़ा मकान, चलने के लिए सड़कें, गाड़ियाँ, और भी पता नहीं क्या-क्या चाहिए लेकिन यह पेड़ तो हर प्रकार की चाहिए-चाहिए से परे है। यह केवल पाँच-छह इंच वाले घेरे में अपने पाँव रोपकर खड़ा है। पाँवों से पीता है, बाकी तो हर अंग से लुटाता ही है।

एक दिन एक भटकती हुई चिड़िया शरण की खोज में आई। पेड़ ने उस नन्ही चिड़िया को अपने आगोश में लेकर इतना सुकून दिया कि वह वहीं बस गई। अब तो उसके नन्हे-नन्हे बच्चे भी बड़े होकर उड़ने लगे हैं और इसे देखकर अन्य बहुत सारे पक्षी भी पेड़ की बाँहों में झूलने लगे हैं। कितना विशाल दिल है इस पेड़ का! क्या हमने आज तक किसी को शरण दी है? क्या किसी भटकते को सहारा देकर उड़ना सिखाया है? क्या थोड़ा-सा लेकर ज्यादा से ज्यादा देने में संतोष अनुभव किया है?

पेड़ हर दिन देने का कोई न कोई नया तरीका निकाल ही लेता है। एक दिन भँवरों और तितलियों का एक बड़ा-सा झुंड आया। सबने पेड़ से कुछ खुसर-पुसर की और चिपक गए उसके फूलों से। पेड़ उन्हें अपने फूलों

का मकरंद पिलाता भी रहा, झुलाता भी रहा और मन ही मन मुसकराता भी रहा। मनुष्य के पास भी रूहानी मकरंद है, रूहानियत की खुशबू है, सोचने की बात है कि वह उसने कितनों को बाँटी? पेड़ की तरह कितनों को अतीन्द्रिय आनन्द में झुलाया? कितनों की आध्यात्मिक भूख-प्यास को तृप्त किया? कितनों को ठंडक दी? कितनों की आत्मा को शीतलता प्रदान की?

एक दिन एक विचित्र घटना घट गई। पेड़ की ठंडी और खुशबूदार हवा में कुछ मिलावट की बू आई। मन में जिज्ञासा हुई कि क्या पेड़ भी कलियुगी मनुष्य की तरह मिलावटी हो गया है? लेकिन बाहर निकलकर देखा तो पाया कि पेड़-पौधों और प्रकृति की 50 वर्षों की सेवा के ऋण से दबा एक व्यक्ति अपने पर और ऋण चढ़ाये जा रहा था। वह नाक और मुख से जहरीला धुआँ निकालकर पेड़ की बदनामी के निमित्त बन रहा था। पेड़ जिस पर्यावरण को बुहारने में लगा था, वह मानव उसी को प्रदूषित कर रहा था।

कितना आश्चर्य है, मानव स्वयं तो खुशबू नहीं दे पाता लेकिन खुशबू देने वाले के कार्य में ही बाधा डालता है इसलिए तो आज मनुष्य अकेला पड़ता जा रहा है। मनुष्यों से भरे संसार में उसे साथ निभाने के लिए मनुष्य नहीं मिल रहा है, क्यों? क्योंकि उसके संग में पेड़ जैसा सुकून मिलने के बजाय विकारों और व्यसनों का ज़हर मिलने का डर पैदा हो गया है।

फूलों के बाद पेड़ पर पीले-पीले, छोटे-छोटे फल लगे। पंछियों का एक दल आया, चोंच में फल भरे और उड़ गया। पेड़ मुसकराता रहा। आसपास के बच्चे आए, पत्थर-डंडे मार-मारकर फलों के साथ पेड़ को भी चोटें पहुँचाई पर पेड़ सब कुछ सहन कर गया। पेड़ ने अपना एक भी फल नहीं खाया। जो भी लेने आया, वह देता गया।

एक दिन आसमान में जोर से बिजली कड़की, आँधी आई और पेड़ की बड़ी-सी टहनी उससे अलग हो गई। परिवार के एक सदस्य के इस बिछोह को देखकर पेड़ की शेष डालियाँ ना तो मुरझाई, ना ही उन्होंने अपना कार्य छोड़ा। पुन: प्रश्न उठा, क्या मनुष्य में इतनी सामना करने की शक्ति है कि वह किसी भी अनहोनी को इतनी सहजता से सह जाए और अपने कर्त्तव्य पर भी अडिग रहे?

ठंड से ठिठुरते एक परिवार ने कुछ समय बाद उस सूखी हुई डाली को उठाया, काटा और जलाकर अपनी ठंड दूर की। पेड़ यह देख भी मुसकराता रहा कि उसका टूटा अंग भी किसी के काम आ रहा है।

कई लोग कहते हैं कि आज के जमाने में कोई आदर्श तो हमारे सामने है नहीं। दान, दया, करुणा, परोपकार, सहनशीलता आदि गुण तो देखकर ही सीखे जाते हैं, हम किसको देखें और किससे सीखें? अरे, हमारे चारों ओर फैली यह प्रकृति हर घड़ी नि:स्वार्थ भाव से देने का पाठ पढ़ा तो रही है, अपने हर कर्म से गुणों का प्रदर्शन कर तो रही है, हम ध्यान से देखें तो सही, प्रशंसा तो करें, अनुकरण तो करें। भारत की संस्कृति ने यदि पेड़ों को देवताओं की संज्ञा दी है तो इनके इसी परोपकारी गुण के कारण। भारत के ऋषि-मुनियों ने आध्यात्मिक अनुसंधान किए हैं पेड़ों की छाया में बैठकर और कई चिंतकों ने इन्हें अपना गुरु भी बनाया है इन्हीं परोपकारी गुणों के कारण।

कहा जाता है, जिसकी रचना इतनी सुन्दर, वह स्वयं प्रकृतिपति भगवान कितना परोपकारी होगा! जैसे वृक्ष का बीज सब कुछ करते भी गुप्त रहता है, इसी प्रकार करन-करावनहार परमपिता परमात्मा भी सृष्टि रूपी वृक्ष के बीजरूप हैं। अपनी रचना में, अपने गुण भरकर वे उसे प्रत्यक्ष कर देते हैं और स्वयं अदृश्य ही रहते हैं। उन्हें देखने के लिए ज्ञान-नेत्र चाहिएँ। वे सदा दाता, सदा परोपकारी और सदा सर्व के कल्याणकारी हैं, गुणों और शक्तियों के अखुट भण्डार हैं। प्रकृति के गुणों को देखते-देखते प्रकृतिपति भगवान के गुणों की अनुभूति स्वत: होने लगती है। ❖

मातेश्वरी की पवित्र गोदी में दिव्य जन्म

• ब्रह्माकुमार खुशीराम साहनी, लुधियाना

माँ-बाप का इकलौता बेटा होने के कारण मैं बचपन में श्रीकृष्ण की तस्वीर से बातें करके दिल खुश करता रहता था। मेरा जन्म पाकिस्तान के जिले अटक (कैमलपुर) के एक गाँव में धनी परिवार में हुआ। घर के पास ही श्रीकृष्ण जी का मंदिर था, उसमें हर रोज़ सवेरे माथा टेकने और आरती करने के बाद ही स्कूल में पढ़ने के लिए जाया करता था। पढ़ाई में होशियार था, अच्छे नंबर लेकर पास होता था। सन् 1944 में, रावलपिंडी शहर में मुझे राशन विभाग में खाद्य निरीक्षक (Food Inspector) की सरकारी नौकरी मिल गई। जब सन् 1947 में भारत को आज़ादी मिली, तो मेरा तबादला लुधियाना शहर में हो गया। जब मैं लुधियाना आया और नौकरी ज्वाइन की तो उसी दिन रहने के लिए मुझे मकान अलॉट हो गया।

जगदम्बा की भक्ति की शक्ति

कुछ समय बाद मेरा विवाह हो गया। हम दोनों पति-पत्नी ने मिलकर श्रीकृष्ण की छोटी-सी मूर्ति खरीदकर, घर पर छोटा-सा मंदिर बना लिया। रोज़ाना हवन करना और वर्ष के सारे व्रत रखने भी शुरू कर दिये। कुछ समय बाद मेरी पत्नी इतनी बीमार हुई कि सब प्रकार की दवा करने पर भी देह त्यागने की स्थिति में पहुँच गई। वह दिल्ली के एक अस्पताल में दाखिल थी। अन्तिम घड़ी को सामने देख डॉक्टरों ने उसकी छुट्टी कर दी। तब उसने कमज़ोर हाथों से एक छोटा पत्र लिखकर मुझे कहा, आप निराश न हों, श्रीकृष्ण की मूर्ति के आगे बैठकर मेरे ठीक हो जाने के लिए प्रार्थना करते रहें। वह 1950 का वर्ष था, पंजाब में सीमेंट का बहुत अभाव था। परमिट पर सीमेंट मेरे द्वारा सबको मिलता था। जगदम्बा माता के मन्दिर का मालिक मेरे पास सीमेंट का परमिट लेने आया, मैं पत्नी का पत्र पढ़कर निराश था। उसने कारण पूछा, मैंने अगले दिन उसकी कोठी पर जाकर कारण बताया। कोठी में पूजा के स्थान पर धूप-अगरबत्ती की जो राख गिरी पड़ी थी, उसने एक पुड़िया में बंद करके मुझे दे दी। मैंने वह पुड़िया दिल्ली में अपनी पत्नी को भेज दी। उस पुड़िया ने ऐसा कमाल कर दिखाया कि उसको खाते ही फोड़ा गायब हो गया और छाती बिल्कुल साफ हो गई। मैंने मंदिर के मालिक से पूछा कि यह किसकी

शक्ति ने कमाल किया तो उसने कहा, मंदिर में रखी जगदम्बा माता की मूर्ति की शक्ति ने। साथ में यह भी कहा कि इस माता को जोतों वाली माता भी कहते हैं, तभी इसने आपकी पत्नी की ज्योत को जीवित रखा। उसके बाद उसने मुझे माता की शक्ति के और भी कई चमत्कार दिखाये। उनसे प्रभावित होकर मैं प्रतिदिन मन्दिर जाने लगा।

मैं ठीक स्थान पर पहुँच गया

उसके बाद हमारे तीन बेटे और एक लड़की पैदा हुई। इस बीच माता की शक्ति से घर में बच्चों की बीमारियाँ आदि भी ठीक हुईं। सोलह जनवरी, 1964 को सतगुरुवार के दिन मैं अपने वकील से मिलने सवेरे-सवेरे उसके घर गया। मुझे नहीं मालूम था कि वह ब्रह्माकुमार भी है। उसके मुख से मातेश्वरी अक्षर सुनते ही अंदर एक झटका-सा महसूस

हुआ। उससे पूछा कि यह मातेश्वरी कौन है तो उसने बताया कि एक नई ईश्वरीय संस्था ब्रह्माकुमारी नाम से है, यह ब्रह्माकुमारी बहनों की एक मुख्य बहन है जो यहाँ लुधियाना में एक सप्ताह के लिए 19 जनवरी को आ रही हैं। संस्था के केन्द्र का पता पूछकर मैं वहाँ चला गया। जैसे ही दरवाज़े के अंदर कदम रखा, मानो आकाशवाणी सुनाई दी, 'आप सही स्थान पर पहुँच गये हो।' सुनकर मैं हैरान हो गया। सामने दीवार पर लटका हुआ एक बोर्ड भी देखा जिस पर लिखा था, 'बुरा न देखो, बुरा न सुनो, बुरा न बोलो, बुरा न सोचो और बुरा न करो' तो झट विश्वास हो गया कि यह बिल्कुल ठीक स्थान है क्योंकि मैंने घर के मन्दिर में ऐसा ही बोर्ड लटकाया हुआ था।

मातेश्वरी से प्रथम मिलन

ब्रह्माकुमारी आश्रम में पहले दिन ही यह ज्ञान मिला कि प्रकृति के पाँच तत्वों से बना शरीर मैं नहीं हूँ, मैं तो चेतन शक्ति ज्योतिबिन्दु आत्मा हूँ जो भ्रकुटि के बीच बैठी हूँ और शरीर की चालक और मालिक हूँ – यह जानकर बंद आँखें खुल गई और खुशी के नशे में घर आकर यह सब अपनी डायरी में लिख लिया। दूसरे दिन परमात्मा के नाम, रूप, धाम, गुणों और कर्त्तव्य की यथार्थ जानकारी मिली तो परमात्मा के बारे में सारी अज्ञानता एक पल में मिट गई और खुशी के नगाड़े मन में बजने लगे। तीसरे दिन मातेश्वरी के बारे में पता चला कि मन्दिर में रखी हुई जगदम्बा माता की मूर्ति इसी मातेश्वरी की जड़ यादगार है, इसी की शक्ति ने मेरी पत्नी की छाती से जानलेवा फोड़े को भगाया है, यही ज्ञान की देवी सरस्वती प्रत्यक्ष होकर ईश्वरीय ज्ञान से अनेक आत्माओं की बुझी ज्योति को जगा रही है और निकट भविष्य में आने वाले सतयुग में यही विश्व महारानी श्री लक्ष्मी बनकर सारे विश्व रूपी भारत में राज्य करेगी। ऐसा जानकर खुशी के फव्वारे एकदम मन में फूट पड़े और उनको शीघ्र देखने और मिलने के लिए मन बेचैन हो गया। अगले दिन सायंकाल वे लुधियाना में पधारीं और रूहानी दृष्टि मेरे ऊपर डाली तो मैं रूहानी नशे में चूर होकर उनके सामने खड़ा हो गया और उन्होंने मेरे हाथ में पकड़े हुए फूल को अपने हाथ में लेकर बड़े प्यार से कहा कि अब तुम्हें इस फूल जैसा बनना है।

पति-पत्नी का सत्धर्म का नाता

अगले दिन उन्होंने अपनी रूहानी शक्ति से मुझे और मेरी पत्नी को अपने पास खींच कर हमारे सिर अपनी पवित्र गोदी में लेकर अति स्नेह से यह शिक्षा दी, 'देह से प्यार करना झूठ से प्यार करना है और आत्मा से प्यार करना सच से प्यार करना है। परमात्मा सदा देह से न्यारा है, उससे प्यार करना ही सच से प्यार करना है, वही परम पवित्र और परम सत्य है। अब मेरी गोदी में आप दोनों का नया, धर्म का जन्म हो चुका है, अब तुम्हें पति-पत्नी का पिछला अधर्म का रिश्ता त्यागकर और भूलकर धर्म-पति और धर्म-पत्नी के रिश्ते में चलना है। भोजन सदैव शुद्ध और सात्विक अपने ही हाथों से बनाकर खाना है और बच्चों को भी खिलाना है। इस अविस्मरणीय मुलाकात के बाद घर आते ही हमने लहसुन और प्याज पड़ोसन को दे दिया। पति-पत्नी के असत्य धर्म के रिश्ते से हमें पहले से ही नफरत हो चुकी थी, इसलिए इसको त्यागने में और पति-पत्नी के सत्धर्म को अपनाने में मनवांछित इच्छा पूरी होने जैसी खुशी हुई।

शुरू-शुरू में पिताश्री जी और मातेश्वरी जी अपना फोटो किसी बच्चे को इसलिए नहीं देते थे ताकि उनका ध्यान निराकार परमात्मा शिव की ओर जाने के बजाय उनके साथ ही न लगा रहे। मैंने मातेश्वरी जी से बड़े प्यार और दिल से जब यह कहा कि जब आपने हमें नया डिवाइन बर्थ

दिया है तो डिवाइन मदर का एक फोटो यादगार रूप में रूहानी दृष्टि देते हुए होना चाहिए। वे मान गये। मैंने सोचा कि पेपर पर खिंचवाये हुए फोटो के फट जाने की संभावना होती है इसलिए टिन पर फोटो उनसे दृष्टि लेते हुए खिंचवाने के लिए एक अच्छे फोटोग्राफर को ले आया। वह फोटो आज भी मैंने बहुमूल्य धरोहर के रूप में संभाल कर रखा हुआ है।

माउंट आबू का निमंत्रण

मातेश्वरी जी के मुख-कमल से और दो दिन ज्ञान-रत्न सुनने से जीवन में एकदम ऐसा परिवर्तन आया कि भक्ति की सारी सामग्री नदी में प्रवाहित कर दी। एक ही ब्रह्माकुमारी आश्रम पर सवेरे-शाम दोनों समय जाना शुरू कर दिया। उसी महीने सरकारी नौकरी छोड़कर पेन्शन लेने लग पड़ा और अपने नाम पर जीवन बीमे की एजेन्सी लेकर एक ही काम की ओर पूरा ध्यान कर लिया। मातेश्वरी जी ने जब हमारे अंदर इतनी जल्दी परिवर्तन होते देखा तो अपने आप ही कहा, 'अब माउंट आबू जाकर पिताश्री ब्रह्मा के तन में पधारे हुए शिव परमात्मा से मंगल मिलन मनाओ।' मातेश्वरी जी से माउंट आबू जाने का आदेश मिलने से, बेहद खुशी इस कारण भी हुई कि वास्तव में ब्रह्मा की आत्मा ही श्री नारायण की आत्मा है जिसको मिलकर मन की इच्छा पूरी होगी। मातेश्वरी जी जब लुधियाना से जालंधर, चड़ीगढ़ और पटियाला में गये तो उनसे ज्ञान-दूध पीने के लिए मैं गाय के बछड़े की तरह उनके पीछे ही भागता रहा। शिवरात्रि के पावन पर्व पर लौकिक पिताजी के देह-त्याग का पूर्व आभास भी मातेश्वरी की शक्ति से मुझे हो गया था।

लुधियाना – मम्मा से दृष्टि लेते हुए लेखक

मातेश्वरी जी के अव्यक्त होने से एक दिन पहले अर्थात् 23 जून, 1965 को हमारी उनसे अन्तिम मुलाकात पाण्डव भवन में हुई थी और उनके पवित्र हाथों से आम की टोली भी मिली थी। ❖

ग्लोबल हॉस्पिटल में महत्त्वपूर्ण चिकित्सा सर्जरी कार्यक्रमों की जानकारी

घुटने व कूल्हे के जोड़ प्रत्यारोपण सर्जरी सुविधा
(Regular Knee and Hip Replacement Surgery)
दिनांक : 15 से 18 जुलाई, 2010
सर्जरी : डॉ. नारायण खण्डेलवाल, मुम्बई से कुशल व अनुभवी सर्जन
(Trained in U.K., Australia and Germany)
पूर्व जाँच के लिये केवल घुटने व कूल्हे के ऑपरेशन के इच्छुक रोगी संपर्क करें –
डॉ. मुरलीधर शर्मा, ग्लोबल हॉस्पिटल, फोन नं. 09413240131
फोन: (02974) 238347/48/49 **फैक्स** : 238570
ई-मेल : ghrcabu@gmail.com **वेबसाइट** : www.ghrc-abu.com

विश्व नशा मुक्ति दिवस पर विशेष..

शराब है खराब

• ब्रह्माकुमारी शकुन्तला गोयल, फरीदकोट

प्रकृति की उदारता देखिए, मानव की रुचि, स्वाद, स्वास्थ्य तथा परिवर्तन की चाह को देखते हुए उसने कितने ही प्रकार के खाद्य पदार्थ, पेय पदार्थ प्रदान किये हैं। बिना किसी रासायनिक क्रिया के, शुद्ध रूप में पीए जाने योग्य कितने ही फलों के रस, नारियल पानी, दूध, छाछ, सत्तू आदि हैं। खट्टे-मीठे, नमकीन, शीतल, गर्म सब प्रकार के पदार्थों का प्रकृति का भण्डार इस कलिकाल में भी मानव की सेवा पर तत्पर है परंतु मानव की दुर्बुद्धि देखिए, इन सबको ठुकराकर वह उस ज़हर को गले उतारता है जिसमें शुद्धि, स्वाद, स्वास्थ्य के नाम पर कुछ भी नहीं है। जिसे पीने के बाद उसकी सबसे कीमती सत्ता बुद्धि विनष्ट हो जाती है और कर्म किसी हैवान या शैतान का अनुकरण करने लगते हैं। जीवन की गाड़ी नियंत्रण से बाहर हो जाती है, जो गड्ढों, झाड़ियों, नालियों में लुढ़कने में देरी नहीं करती है। उस बेस्वाद पदार्थ में चाहे कीड़े पड़े हों, चाहे ज़हरीले पदार्थ – वह बेपरवाह होके उसके आगे बेबस-सा घुटने टेक देता है, उसका गुलाम बन जाता है। इतिहास साक्षी है, गुलाम बनने वाले का अपना कुछ रह ही नहीं जाता। आज मानव की ना सही पर शराब की गुलामी में मानव सब कुछ लुटा रहा है। घर-परिवार सहित अपनी अन्तरात्मा को भी गिरवी रख रहा है।

शराब से सभी बुराइयों का जन्म

जापानी भाषा में कहा गया है, 'पहले मनुष्य शराब को पीता है, फिर शराब मनुष्य को पीती है।' सभी धर्मस्थापकों ने मदिरापान का निषेध किया है। महात्मा गांधी भी मद्यपान के कट्टर विरोधी थे। उन्होंने कहा था, 'अगर कभी भारत की सत्ता मेरे हाथ आई तो मैं प्रथम आधे घंटे में समस्त शराब की दुकानें बंद करवा दूँगा और उसके बदले में रकम भी नहीं दिलाऊँगा। मैं मद्यपान को चोरी, वेश्यावृत्ति से भी अधिक हानिकारक मानता हूँ। वास्तव में सभी बुराइयों का जन्म ही इसी से होता है।'

शराब छुड़ाने में बीरबल की बुद्धिमानी

वर्णन आता है कि मुगल शासक भी मदिरा के शिकार थे। राजा अकबर भी अपने राज-पाट के दायित्व को भूल शराब के दास बन गए। बीरबल को बड़ी चिन्ता हुई कि अगर अकबर का यही हाल रहा तो मुगल शासन का पतन हो जायेगा। बीरबल बहुत बुद्धिमान थे। उन्होंने बादशाह की शराब छुड़ाने की योजना बनाई। राजा अकबर जब अपने मद्यखाने में थे तो बीरबल वहाँ घुस गए जहाँ शराब की बोतलें पड़ी थीं। बादशाह नशे में मदहोश थे। बीरबल ने शराब की बोतल अपनी कांख में दबाई और धीरे-धीरे बादशाह के आगे से जाने लगे। बादशाह ने पूछा, बीरबल, बगल में क्या दबा रखा है? बीरबल ने कांपते हुए उत्तर दिया, हजूर कुछ नहीं। बादशाह ने कहा, अगर कुछ नहीं तो कपड़े में क्या छुपा रखा है? बीरबल बोला, सरकार, यह कुत्ता है। अकबर ने कहा, कुत्ता है, फिर बगल में क्यों? बीरबल डरते हुए बोला, नहीं हजूर, यह कुत्ता नहीं, घोड़ा है, मैं भूल गया, क्षमा करें महाराज! बादशाह ने कहा, कभी कुत्ता, कभी घोड़ा, सच-सच बताओ, यह क्या है? बीरबल ने कहा, जहांपनाह, सच पूछो तो यह

एक हाथी है। बादशाह ने कहा, क्या हाथी भी बगल में दबाया जा सकता है? सच-सच बताओ। बीरबल ने डरते हुए कहा, हजूर, यह मुर्दा है। बादशाह को क्रोध आ गया। उसने बीरबल के कंधे से कपड़ा उठा दिया। देखा तो शराब की बोतल थी। बादशाह ने कहा, अरे बेवकूफ, यह क्यों नहीं कहता है कि यह शराब की बोतल है। बीरबल ने कांपते हुए स्वर में कहा, यही तो मैं भी अर्ज़ कर रहा था। शहंशाह ने कहा, तू तो कह रहा था कि कुत्ता है, घोड़ा है, हाथी है, मुर्दा है। बीरबल ने बड़े धैर्य से कहा, हजूर, बात एक ही है। शराब की एक बोतल में चार गिलास होते हैं। हजूर, जब इंसान पहला गिलास पीता है तो वह कुत्ता बन जाता है। वह अच्छे-बुरे आदमी को देखते ही भौंकने लग जाता है। अकबर ने कहा, ठीक है, फिर घोड़ा कैसे बन जाता है? बीरबल ने कहा, शहंशाह, जब आदमी दूसरा गिलास पीता है तो वह बेकाबू हो जाता है, उसे अपनी सुध-बुध नहीं रहती। वह घोड़े की तरह हिनहिनाने लगता है। वह औरत को देखते ही बेकाबू हो जाता है। इस प्रकार शराबी आदमी पराधीन हो जाता है। अकबर ने पूछा, बीरबल, तुमने शराब को हाथी क्यों कहा?

बीरबल बोले, शहंशाह, शराब का तीसरा गिलास गटकते ही मनुष्य हाथी-सा मदमस्त हो जाता है। शराबी आदमी गाली-गलौज, छीना-झपटी करने लगता है। उसे अच्छे, बुरे का बोध नहीं रहता। उसे ज्ञान नहीं रहता कि उसके दिलो-दिमाग पर कौन सवार है।

अब अकबर ने चौथा सवाल किया कि शराब मुर्दा कैसे है? बीरबल ने फरमाया, 'बादशाह हजूर, शराब का अंतिम गिलास पीते ही मनुष्य बेजान और मुर्दा होकर नाली में गिर पड़ता है। कुत्ता उसका मुँह चाटता है। हजूर, मैंने इसलिए इसे 'कुछ नहीं' कहा क्योंकि कहाँ आप, कहाँ मुर्दा! आप चाहे इसे जो मर्जी कहें, मैं तो इस शराब को कुत्ता, घोड़ा, हाथी और मुर्दा ही कहूँगा। अकबर को अब समझ आ गई थी। बादशाह के मुँह से निकल पड़ा, ओह, शराब है खराब, शराब है खराब।

इस प्रकार बीरबल ने युक्ति रचकर अकबर का कल्याण किया। इसके बाद महाराजा अकबर अपने राज-काज की तरफ ध्यान देने लगे और माता ज्वाला देवी के पक्के भक्त बन गए। आज भी उनका चढ़ाया हुआ सोने का छत्र इस बात का प्रतीक है।

शराबी है धरती पर बोझ

अकबर भाग्यशाली था, उसे अपने एक दरबारी की बात समझ में आ गई। परंतु, इस समय तो बड़े से बड़े पिता, शहंशाहों के भी शहंशाह, शहंशाहों को भी बनाने वाले निराकार परमपिता परमात्मा शिव स्वयं सृष्टि पर अवतरित होकर मानव मात्र को समझा रहे हैं कि यह शरीर मन्दिर है। जैसे मंदिर में तामसिक चीज़ों को नहीं चढ़ाया जाता, इसी प्रकार शरीर में भी तामसिक पदार्थों का भोग वर्जित है। 'जैसा आहार, वैसा व्यवहार' की कहावत के अनुसार, शराब मानव के सभी सद्गुणों को चाट जाती है। सद्गुण विहीन मानव धरती पर बोझ समान ही है। शराब पीकर वह स्वयं की, समाज की और विश्व की जो हानि करता है उस कर्ज़ को कई जन्मों तक चुकाना भी मुश्किल है। ऐसे कर्ज़ के तले दबने से तो अच्छा है कि इस महाविनाशकारिणी शराब को ही दबा दिया जाये। ❖

प्रकाशन सामग्री से संबंधित सूचना

ज्ञानामृत कार्यालय में भेजी जाने वाली प्रकाशन सामग्री (लेख, कविता, गीत, अनुभव, संस्मरण, पत्र आदि) के साथ कृपया अपना पूरा पता, सेवाकेन्द्र का नाम तथा मोबाइल नंबर अवश्य लिखें।

मैंने बाबा को अपना बच्चा बना लिया

• ब्रह्माकुमारी मालन गलांडे, पूना

बड़े घर में मेरी शादी हुई, धन-दौलत की कमी नहीं थी पर संतान प्राप्ति न होने के कारण बहुत ही दुखी रहती थी। ससुराल वालों ने युगल से कहा, दूसरी शादी कर लो पर यह मेरी खुशकिस्मती रही कि मेरे युगल (पति) किसी भी कारण से मेरा साथ नहीं छोड़ना चाहते थे, इसलिए उन्होंने घरवालों की इस बात पर बिल्कुल ध्यान नहीं दिया।

मैंने संतान प्राप्ति के लिए अनेक व्रत किये, मंदिरों के फेरे भी लगाए, पूजा-पाठ किया पर संतान नहीं मिली। ऐसा महसूस होने लगा मानो सब मेहनत पानी में गई। मैं बहुत निराश, उदास रहने लगी। शिव मंदिर में जाकर भी मन का रोना खूब रोया, मरने का विचार भी मन में आया, ये सब विचार भी मंदिर में भगवान के आगे सुना दिये। सुनाने से मन कुछ हलका अवश्य हुआ पर समस्या तो ज्यों की त्यों ही थी।

अनुभव शान्ति का

एक दिन घर के पास, गणेश उत्सव के दौरान ईश्वरीय सेवार्थ सफेद वस्त्रधारी बहनें आईं, मैं भी वहाँ थी। उन्होंने गणेश जी का आध्यात्मिक रहस्य सुनाते हुए ईश्वरीय ज्ञान दिया। मुझे बहुत अच्छा लगा और सुनते-सुनते शान्ति का अनुभव हुआ। **महसूस होने लगा कि मेरे हर सवाल का जवाब यह शान्ति ही है। ज्ञान की प्राप्ति के लिए यह शान्ति जैसे एक टिकट थी जो भगवान शिव ने गुप्त रूप में मुझे दी थी। इस अनुभव से मुझे सच्ची खुशी मिली जो इससे पहले कभी नहीं मिली थी।** मैं उन बहनों से मिली और उन्हें घर आने का निमंत्रण दिया।

नवरात्रि के दिन बहनें हमारे घर आई। सारे परिवार को ईश्वरीय ज्ञान अच्छा लगा। मैं भक्ति मार्ग में गीता पढ़ती थी, उसमें आत्मा अमर है, अविनाशी है, यह भी पढ़ती थी तो मन में विचार चलता था कि श्री कृष्ण और श्री राम ने इस धरती पर जन्म लिया, फिर उनकी आत्मायें अब कहाँ होंगी। इन प्रश्नों का उत्तर भी मुझे ईश्वरीय ज्ञान से मिल गया।

मुरली से मिला हर प्रश्न का उत्तर

मैं रोज मुरली सुनने सेन्टर पर जाने लगी। जो सवाल परेशानी बन मेरे जीवन में खड़े थे, उन सभी के जवाब मुझे मुरली में मिलने लगे। मेरी खुशी दिन-ब-दिन बढ़ती गई। सच, प्यारे-मीठे बाबा की मुरली में वह सब कुछ भरा हुआ है जो हमें सुख-शांति संपन्न जीवन जीने के लिए चाहिए होता है। एक दिन बाबा ने मुरली में कहा कि बाबा को अपना बच्चा बना लो तो तुम्हारी सब परेशानियाँ मिट जायेंगी। प्यारे बाबा की उस प्वाइंट ने मुझे छू लिया। मुझे यह महसूस हुआ कि बाबा ने मुझे ही यह बात कही है। उस दिन से तो मेरी सारी परेशानियाँ मिट गईं। मैंने सचमुच ही प्यारे-मीठे बाबा को अपना बच्चा बना लिया है। मेरा प्यारा-प्यारा बच्चा, मेरा बाबा। उसी दिन से मुझे सच्ची खुशी का, सुख का ज़रिया (स्त्रोत) मिल गया 'मेरा बाबा'। मुझे वह अधिकार मिल गया जो हर माँ को मिलता है। जैसे लौकिक में बच्चे की हर ज़िम्मेवारी उठाई जाती है वैसे प्यारे शिव बाबा की पूरी ज़िम्मेवारी सेन्टर के माध्यम से पूरी करती हूँ।

कुछ दिनों के बाद अव्यक्त बापदादा से मिलन मनाने के निमित्त मधुबन जाना हुआ। मधुबन का अनुभव तो हर किसी को छूता ही है, मुझे भी छू गया। जब प्राणों के प्राण प्यारे-मीठे बाबा से मीठा मधुर मिलन हुआ तो दिल खुशी से झूमने लगा। मन खुशी से गाने लगा –

पाके तुझको बाबा
सुख का सार पा लिया
पाने को ना कुछ रहा
जब तुझको पा लिया

अमृतवेला : वरदानी वेला

• ब्रह्माकुमार सूर्य, आबू पर्वत

जब सारा संसार सोता है तब ब्रह्मावत्स अपने परमपिता से सुखद व अलौकिक मिलन मनाते हैं। हमारे प्राणेश्वर शिव बाबा ने हमें रोज़ ब्रह्म-मुहूर्त में मिलने का अधिकार दे दिया है। इस बेला को ब्रह्म-मुहूर्त कहते ही इसलिए हैं क्योंकि इस समय हम ब्रह्मलोक में निराकार भगवान से मिलन का अतीन्द्रिय सुख प्राप्त कर सकते हैं। यह मिलन उन्हें ही होता है जो उनके बच्चे बन गये, जो उनसे ज्ञान प्राप्त करके स्वदर्शन चक्रधारी बन गये और जो पतित-पावन परमात्मा से योग-युक्त होकर पावन बन गये। परमात्मा हमारे परमपिता हैं - यह भला कैसे हो सकता है कि वे हमसे मिलते ही न हों !

कितना श्रेष्ठ भाग्य है ब्रह्मावत्सों का कि रोज़ सवेरे उठकर यह अतीन्द्रिय सुख प्राप्त करें। कई आत्माएँ उठते तो हैं परन्तु परमात्म-मिलन की अनुभूति नहीं होती, कई तो उठते ही नहीं। भिन्न-भिन्न आत्माओं का यह समय विभिन्न रूपों में बीतता है। हम यहाँ कुछ बातें आपके समक्ष रख रहे हैं ताकि आप इस वरदानी वेला का परम आनन्द ले सकें।

सर्वप्रथम तो यह ध्यान रहे कि रात्रिकाल जितना सतोप्रधान होगा, अमृतवेला उतना ही श्रेष्ठ होगा। भारी भोजन, देर से भोजन, देर से सोना, टी.वी.देखते हुए सोना, सारा दिन बाह्यमुखी रहना, तनाव में रहने की आदत या सारा दिन ईश्वरीय आज्ञाओं का उल्लंघन करना - यदि ये सब हैं तो न नींद सुखद, न अमृतवेला आनन्दकारी होगा। अपने से बातें करें...क्या मुझे परमात्म सुख लेना है? यदि हाँ तो इन बातों का त्याग अवश्य करें। यदि सम्भव हो तो रात्रि सोने से पूर्व आधा घण्टा घूमकर या घर में सुन्दर चिन्तन में व योगाभ्यास में बितायें। यदि आप सवेरे उठ ही नहीं सकते तो अन्य बात है।

इस काल का सर्वाधिक महत्व इसलिए है कि इस समय शिव बाबा अपने ब्रह्मावत्सों के लिए होते हैं। यह वेला प्रात: 3 बजे से 5 बजे तक है। इस समय सर्वशक्तिवान बाप आत्माओं में शक्तियाँ भरते हैं। वरदाता परमपिता वरदान देते हैं, समस्याओं का हल अनुभव कराते हैं। इस समय क्योंकि हमारा मन शान्त होता है, वायुमंडल सात्विक होता है, तो हम सारे दिन के लिए जबकि हमें कर्मक्षेत्र-युद्धक्षेत्र में रहना

है, स्वयं में परमात्म बल भर सकते हैं। यूँ तो कभी भी योगाभ्यास किया जा सकता है परन्तु अमृतवेले सहज प्राप्तियाँ होती हैं व अनोखा अनुभव होता है। आओ, हम संकल्प करें कि हमें अमृतवेले को पावरफुल बनाना है। प्रस्तुत हैं कुछ युक्तियाँ -

स्वयं को जगाओ

शारीरिक रूप से तो हम उठ जाते हैं परन्तु प्रतिदिन एक बार सुबह हमें स्वयं की चेतना को भी जगाना चाहिए। जगते ही आप स्वयं को जगायें। विस्मृति होना माना सोना और स्मृति स्वरूप होना माना जगना। अनेक सांसारिक कारणों से मनुष्य विस्मृति की नींद में सो जाता है। उसको स्वयं की शक्तियों की, प्राप्त वरदानों की व अपनी महानताओं की विस्मृति हो जाती है। भगवान आकर हमें रोज़ जगाते

हैं.....

• वे याद दिलाते हैं कि तुम साधारण नहीं हो, महान हो।

• तुम कमजोर नहीं हो, ईश्वरीय शक्तियों से सम्पन्न मास्टर सर्वशक्तिवान हो।

• तुम पूर्वज हो, तुम्हें सबकी पालना करनी है।

• तुम इस सृष्टि के आधारमूर्त हो, तुम इस जहान् के नूर हो, तुम्हारी मनोस्थिति का प्रभाव सारे विश्व पर पड़ता है।

• तुम लॉ मेकर हो, तुम्हारे कर्म विधान बन जाते हैं।

• तुम विजयी रत्न हो। माया को तुमने कल्प-कल्प जीता है।

ये सब याद करते ही सुषुप्त आत्मा जागृत हो जाएगी। उठते ही संकल्प करो कि हे योगी उठो, तुम्हें विश्व कल्याण करना है । इससे बन्द तीसरा नेत्र खुल जाएगा।

याद रहे, जब प्रतिदिन हम आँख खोलते हैं तो हमारा प्रथम संकल्प हमारे जीवन पर सर्वाधिक प्रभाव डालता है क्योंकि तब हमारा अन्तर्मन पूरी तरह जागृत होता है। वो हमारे संकल्पों को तुरन्त ग्रहण कर लेता है। याद रहे, हमारे अन्तर्मन में सबकुछ करने की अपार शक्ति है। यदि हम अन्तर्मन को शुद्ध कर दें तो इसकी ग्रहण शक्ति सम्पूर्ण हो जाती है और यह हमारे उन संकल्पों को तुरन्त स्वीकार कर लेता है जिनमें हमारा सम्पूर्ण विश्वास हो और यह काम सवेरे के प्रथम 10 मिनट में होता है क्योंकि तब हमारा बाह्य मन शान्त है।

स्वयं को चार्ज करें

लोग अपने फोन को तो रोज़ चार्ज करते हैं परन्तु स्वयं को बिना चार्ज किये ही मैदान पर उतरते हैं। परिणामत: विस्फोट होते रहते हैं। हम स्वयं को परमधाम में स्थित सर्वशक्तिवान परमपिता से जोड़ें अर्थात् एक संकल्प में स्थित होकर बुद्धि को उनके महाज्योति स्वरूप पर स्थित करें। इससे परमात्म-शक्तियाँ आत्मा में समाने लगेंगी।

• मैं मास्टर सर्वशक्तिवान हूँ - इस अभ्यास से स्वयं को चार्ज करें। अभ्यास करें कि परमात्म-शक्तियाँ मुझमें समा रही हैं।

• मैं परम पवित्र आत्मा हूँ... बाबा की पवित्रता की किरणें मुझ पर पड़ रही हैं।

• मैं फरिश्ता हूँ...पवित्रता का सूर्य हूँ...इस स्मृति से स्वयं को चार्ज करें।

इस तरह एक बार अच्छी तरह एकाग्रता द्वारा स्वयं को परम आनन्द की अनुभूति में लायें। बस महाज्योति के अलावा कुछ भी दिखाई न दे। यदि कुछ मिनट भी यह स्थिति रहे तो भरपूर होने का, तृप्त होने का अनुभव होगा।

स्वयं को अमृत से भरपूर करें

ब्रह्म-मुहूर्त को अमृतवेला इसीलिए कहते हैं कि इस समय हम स्वयं को ज्ञान-अमृत से भरपूर करें। यूँ तो ईश्वरीय महावाक्यों से हम स्वयं को भरपूर करते ही हैं परन्तु सवेरे के समय जब मस्तिष्क काफी हद तक शान्त होता है, यदि हम स्वयं को कुछ महावाक्य याद दिलायेंगे तो हम बहुत खुश, जागृत व सम्पन्न महसूस करेंगे।

यदि सम्भव हो तो आप अपने घर में अव्यक्त महावाक्य, अव्यक्त बापदादा की आवाज़ में सुनें। सवेरे यदि आधा घंटा घर में अव्यक्त महावाक्य सुनें तो वातावरण योगयुक्त हो जाएगा व नींद भी नहीं आयेगी।

सवेरे के समय ये महावाक्य याद कर सकते हैं -

• स्वयं भगवान हमारा हो गया...वह खुदा दोस्त हमारा सच्चा दोस्त है।

• विनाशकाल में मुझे अनेक आत्माओं के दुख हरने हैं, प्रत्यक्षता में मुझे महत्वपूर्ण पार्ट बजाना है।

• बाबा मुझे कैसा देखना चाहता है? मैं स्वयं को कैसा देखना चाहता हूँ?

• परमात्म शक्तियाँ व वरदान मेरे

पास हैं।

• मैं परिस्थिति व समस्याओं से अधिक शक्तिशाली हूँ।

• अनेक भक्त मेरा सम्पूर्ण स्वरूप देखना चाहते हैं।

• मुझे सारे विश्व को सकाश देना है...संसार को श्रेष्ठ वायब्रेशन्स की बहुत आवश्यकता है।

• यह खेल पूरा हुआ, अब सब कुछ छोड़कर मुझे घर जाना है।

आप स्वयं भी अनेक बल देने वाले महावाक्यों का संग्रह कर लें व उन्हें पढ़ा करें।

भगवान से बातें करें

अमृतवेले को परम सुखकारी बनाने के लिए इस शान्त समय में भगवान से बातें करें। उनसे हमें क्या-क्या मिला है, उन्हें धन्यवाद दें, इससे परमात्म-प्यार में वृद्धि होगी। ऐसा न हो कि आप उनसे प्रश्न ही पूछते रहें या अपनी समस्याएँ ही सुनाते रहें। सुना सकते हैं परन्तु सुनाकर समर्पित भी कर दें व हल्के हो जाएँ। प्रश्न उनके सम्मुख रख दें, आपको उत्तर स्वत: ही मिल जाएगा। शिव बाबा से रूहरिहान ऐसे करें कि मन आनन्द से भर जाए।

उन्हें अपना दोस्त बनाकर बातें करें और इस तरह रोज़ सवेरे खुशी की खुराक खायें, याद करें, मुझ जैसा खुशनसीब कोई नहीं, जिसे रोज सवेरे आँख खुलते ही भगवान मिलते हैं, वाह, हम क्या से क्या बन गये! सम्पूर्ण सृष्टि चक्र व तीनों लोक हमारी आँखों के मानो सम्मुख हैं।

स्वयं को प्राप्त वरदानों की स्मृति दिलायें

जरा सोचें...स्वयं भगवान ने हमें वरदान दिये हैं। वे वरदान बड़े प्रभावी हैं। रोज प्राप्त वरदानों को हम नशे सहित स्मृति में लायें और कर्म के समय भी याद करें तो वे फल देने लगेंगे।

महसूस करें कि मैं सूक्ष्म वतन में हूँ या बापदादा यहीं पर मेरे सम्मुख हैं, मुझे दृष्टि दे रहे हैं और उन्होंने अपना वरदानी हस्त मेरे सिर पर रख दिया है और फिर बोले -

• बच्चे, मैं सदा हजार भुजाओं सहित तुम्हारे साथ हूँ...जब भी तुम मुझे बुलाओगे, मैं तुम्हें मदद करने आ जाऊँगा। याद रखना, भगवान के बच्चे बुलायें और बाप न आये, ये हो नहीं सकता।

• बच्चे, तुम मास्टर सर्वशक्तिवान हो, मेरी समस्त शक्तियाँ तुम्हारे साथ हैं।

• बच्चे, तुम विघ्न विनाशक हो। बाप का तुम्हें वरदान है कि जहाँ भी तुम कदम रखोगे, वहाँ के विघ्न नष्ट हो जाएँगे।

इस तरह स्वयं को वरदानी बनाओ।

विश्व को सकाश दें

सवेरे-सवेरे, जब सब सोये हैं, विश्व को सकाश देने में बड़ा आनन्द आएगा। अच्छा योग करने के बाद अभ्यास करें - मैं मास्टर ज्ञान सूर्य हूँ...मेरे मस्तक, नयनों व अंग-अंग से चारों ओर किरणें फैल रही हैं।

दूसरा अभ्यास करें कि मैं पवित्रता का फरिश्ता हूँ...मैं भिन्न-भिन्न नगरों के ऊपर हूँ। बाबा की किरणें मुझ पर पड़ रही हैं व मुझसे नीचे फैल रही हैं।

ध्यान रखें, हम यदि सकाश नहीं देंगे तो अनेक आश्रित आत्माएँ प्यासी व निर्बल ही रह जाएँगी।

अमृतवेले के सुख के बिना आत्मा अतृप्त ही रह जाती है, ऐसा लगता है कि आज कुछ खो गया है। भगवान को पाकर यदि उससे सम्पूर्ण सुख न लिया तो यह बुद्धिमानी नहीं कहलायेगी। यह वेला, सर्व प्राप्ति करने की वेला है। इसमें भगवान को राज़ी किया जा सकता है, उससे प्यार की अनुभूति की जा सकती है व स्वयं को शक्ति सम्पन्न व एकाग्रचित्त बनाया जा सकता है। सवेरे उठना स्वास्थ्य के लिए भी लाभप्रद है और इसी समय श्रेष्ठ चिन्तन का भी सुख मिलता है।

❖

गतांक से आगे ..

डिप्रेशन : जानकारी और समाधान

'डिप्रेशन' विषय पर, बहन कनुप्रिया द्वारा पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दे रहे हैं ब्रह्माकुमारी शिवानी बहन तथा ब्रह्माकुमार डॉ. गिरीश पटेल भाई।

प्रश्नः- डिप्रेशन की बीमारी बहुत फैलती जा रही है, बहुत लोग इसके शिकार हैं, इसकी परिभाषा और लक्षण बताइये।

उत्तरः- डिप्रेशन शब्द में ही इसका अर्थ समाया है। डिप्रेस माना किसी को दबाना, नीचा करना। वैसे ही व्यक्ति जब अपने आपको नीचा समझता है, जीवन में रुचि खो बैठता है, तो इस प्रकार की स्थिति को कहेंगे डिप्रेशन। इसके कई लक्षण भी हैं। अमेरिकन साइकेट्रिक सोसायटी ने हर बीमारी के लक्षणों की सूची तैयार की है। उनमें से यदि 60 या 70% लक्षण लागू होते हैं तो कहेंगे, यह डिप्रेशन है।

प्रश्नः- व्यक्ति जब खुद को नीचा समझने लगता है तो सेल्फ एस्टीम उसे कहाँ मदद करती है? कहाँ हम अपनी इस योग्यता को खो बैठते हैं?

उत्तरः- अपने को, अपनी शक्तियों को, विशेषताओं को नहीं पहचानते तो खालीपन आता है। विचार चलता है कि मेरे से नहीं हो सकता, मेरे साथ कुछ भी अच्छा नहीं हो रहा। कोई न कोई ऐसा नकारात्मक विचार उसे हतोत्साहित कर देता है। कितनी भी कोशिश करूँ, मुझे सफलता नहीं मिलती; मुझसे कोई अच्छी तरह बात नहीं करता; जो उसके पास है, वो मुझे नहीं मिलता; लोग मेरे बारे में न जाने क्या सोचते हैं – इस प्रकार की सोच से हमारी आंतरिक शक्ति और सुन्दरता नष्ट हो जाती है।

प्रश्नः- लोगों में भ्रान्ति है कि कोई व्यक्ति सदा खुश नहीं रह सकता। कभी खुशी, कभी गम चलते रहना ही स्वाभाविक जीवन है परन्तु राजयोग के अभ्यास से मानव सदा खुश रहने का दावा करता है तो क्या यह स्थितप्रज्ञ वाली स्टेज है?

उत्तरः- यह वास्तव में नेचुरल स्टेज है। इसका आधार यह समझ है कि शरीर को चलाने वाली हम दिव्य चेतना हैं जिसका स्वभाव है सुख। आत्मा सुख स्वरूप है। आत्मा ही सत्-चित्त-आनंदस्वरूप है। यही हमारी पर्सनैलिटी है। मान लो, कोई डॉक्टर है, भले सारी दुनिया कहे कि यह डॉक्टर नहीं है पर वे तो नहीं मानेंगे कि वे डॉक्टर नहीं हैं। उन्हें अंदर पक्का है कि मैं हूँ। इसी प्रकार कुछ चीज़ें ईश्वरीय वर्से में प्राप्त हैं जो समय के अंतराल में भूल गई हैं पर भूलनी नहीं चाहिएँ। उनमें से एक यह अनुभव है कि 'मैं हूँ ही सुख स्वरूप।' बाहर चाहे जो भी हो जाये, हमारी यह सुखस्वरूप की स्वाभाविक नेचर उससे प्रभावित नहीं होगी। इसका अर्थ यह नहीं है कि हम लोगों से कट ऑफ हो जाएँ या उनकी परवाह करना छोड़ दें। इसका अर्थ यह है कि अपने आंतरिक सुख को डिस्टर्ब किए बिना भी हम लोगों से मेलजोल, स्नेह, सहयोग बनाए रख सकते हैं। एक है, दूसरे के दुख में हम खुद भी दुखी हो जाते हैं और दूसरा है, हम अपने सुख को बनाए रखते हुए दूसरे को मदद करते हैं। दूसरी स्टेज बहुत अच्छी है।

कई बार सास-बहू एक-दूसरे की शिकायतें करती

हैं। मैं कहता हूँ, आप दो काम करो, एक तो अपने नज़रिये को बदलो, दूसरा, दूसरी जो बोल रही है उसे संगीत समझकर आनन्द लो।

प्रश्नः- हम ग़लत सोचते हैं इसलिए केमिकल असंतुलन है या केमिकल असंतुलन के कारण गलत सोचते हैं?

उत्तरः- दोनों बातें सही हैं परंतु पहले, ग़लत सोचने से केमिकल असंतुलन होता है फिर इस असंतुलन के कारण ग़लत सोच बढ़ती जाती है। कई बार जीन्स का भी रोल होता है। किसी व्यक्ति या परिस्थिति का कारण ना होने पर भी डिप्रेशन आता है तो उसे परिडोमिनेन्ट केमिकल इम्बेलेन्स कहेंगे।

प्रश्नः- डिप्रेशन के लक्षण बताइये।

उत्तरः- कई सारे लक्षण हैं जैसे, व्यक्ति बिना कारण कहेगा, आज ऑफिस नहीं जाना, घर में पड़ा रहेगा। अच्छे से स्नान करने का उमंग नहीं होगा। अच्छे से कपड़े नहीं पहनेगा। शेविंग करना, नाखून काटना – ये कार्य भी नहीं करेगा। मान लो, छुट्टी के दिन व्यक्ति थोड़ा फ्री रहना चाहता है और दिनचर्या बदल लेता है, वह अलग बात है परंतु पाँच-सात दिन लगातार यदि उमंगहीन चर्या चलती रहे तो समझ लेना चाहिए कि डिप्रेशन की शुरूआत है। खाने का भी मन नहीं करता, भले कितना भी अच्छा खाना बना हो। ज्यादा डिप्रेशन में सारी रात नींद भी नहीं आती परंतु कम डिप्रेशन में या शुरूआत में ऐसा भी होता है कि एक बार नींद आ गई फिर दो या तीन बजे सुबह उड़ गई, फिर लाख कोशिश करने पर भी नहीं आती है। वजन भी कम होता जायेगा। वैसे तो डायबिटिज़ में भी कम हो जाता है पर वह अलग पहलू है। कई बार डिप्रेशन वाला बहुत ज़्यादा भी सोता है। अतः नींद की अति भी डिप्रेशन का लक्षण है। जीवन जीने की इच्छा खत्म हो जाती है।

प्रश्नः- क्या किशोरों-युवाओं में भी यह हो सकता है?

उत्तरः- कई बार किशोर और युवा कनफ्यूज़ हो जाते हैं। शरीर में हारमोनल परिवर्तन आ रहे होते हैं। शरीर बढ़ भी रहा होता है। उनको अपने प्रश्नों के उत्तर नहीं मिलते तो भी डिप्रेस होते हैं। स्कूल की पढ़ाई तक एक सुरक्षित वातावरण रहता है परंतु कॉलेज में आने के बाद कम्पेरिजन, दूसरों जैसा बनने की कोशिश, शारीरिक सुन्दरता के पीछे दीवानापन जैसी बातें होती हैं। ये भी डिप्रेशन के कारण हैं। दूसरा, इस अवस्था के बच्चे की माता-पिता से भी उतनी नज़दीकी नहीं रह पाती। वो सोचता है, मैं अपने निर्णय खुद ले सकता हूँ। व्यक्तिगत संबंधों में भी कई बार वो इतने फँस जाते हैं कि माता-पिता से दूरी हो जाती है। वे व्यक्तिगत स्वतंत्रता को बहुत महत्त्व देने लगते हैं। आंतरिक सत्य ज्ञान के अभाव में ये सभी कारण, ग़लत रास्तों पर ले जाने के निमित्त बनते हैं।

आज की सबसे बड़ी समस्या है कि माता-पिता बच्चों को समय नहीं देते। मेरी राय है कि आप भले कम कमाओ, मकान छोटा लो पर बच्चों को प्रतिदिन एक घंटे का समय ज़रूर दो। सबसे कम काम हमने खुद के लिए किया है, औरों के लिए हम बहुत कुछ करते हैं। वे माता-पिता जो खुद अच्छी मानसिक मजबूती में नहीं हैं, अपने बच्चों को डिप्रेशन से बाहर निकलने में मदद नहीं कर पाते।

प्रश्नः- आज पश्चिमी सभ्यता के आकर्षण का जाला हमारी आँखों पर है पर पश्चिम, भारत की नकल कर रहा है। हम उनकी नेगेटिविटी की तरफ आकर्षित हैं और वे हमारी धरोहर रूपी पॉजिटिविटी की तरफ आकर्षित हो रहे हैं, इसका क्या अर्थ है?

उत्तरः- भूटान के राजा को किसी ने पूछा, आपके यहाँ प्रति व्यक्ति आय कम क्यों है? उसने कहा, मुझे इसकी ज्यादा फिकर नहीं है, मुझे इसमें ज्यादा रुचि है कि प्रति व्यक्ति खुशी कितनी है? वेस्टर्न हों या ईस्टर्न – सभी को सबसे पहले इस बात पर ध्यान देना है कि प्रति व्यक्ति खुशी कितनी है और उसे कैसे बढ़ाया जाये। ❖

राजयोग ने किया कमाल

• ब्रह्माकुमार बैजनाथ, ओ.आर.सी.

''धन और दौलत के बल से हम शानो-शौकत पा सकते हैं, जमीं-आसमां को नाप सकते हैं, अथाह अर्थ संग्रह कर भौतिकता के शिखर पर पहुँच, संसार में अमीरों, नवाबों, शाहों, सेठों की सूची में आ सकते हैं परन्तु क्या धन और दौलत के बल से प्रेम-भाईचारे को खरीद सकते हैं? क्या धन और दौलत के बल से हम नेक इंसान का निर्माण कर सकते हैं? यदि किसी की माँ का साया उसके सिर से बाल्यकाल से ही उठ गया हो तो क्या उसे ममता का अनुभव हम धन देकर करा सकते हैं?

प्रतिस्पर्धा के इस भौतिकवादी युग में आज मानव को न प्रेम-भाईचारे की सुध रही है, न अपने-पराये की, न ही चरित्र की गुणवत्ता का कोई महत्त्व रहा है। संसार में जिधर देखो उधर स्वार्थपरता, धन-लोलुपता, वैर-वैमनस्य ही बढ़ता नज़र आ रहा है। व्यक्ति स्वयं के स्वार्थ को सिद्ध करने के लिए खून के रिश्तों के साथ ही, खून से खेल रहा है।''

दत्त जयंती के निमित्त आयोजित 600 की एक सभा में उपरोक्त उद्‌गार मैंने उच्चारे। सभा में एकदम सन्नाटा छाया हुआ था मानो सूई गिरे तो भी आवाज़ हो। यह सन्नाटा मेरे उमंग-उत्साह को बढ़ावा दे रहा था। मैंने अपने उद्‌बोधन को आगे बढ़ाते हुए कहा –

''एक वह भी ज़माना था जिसे हम रामराज्य कहा करते हैं, जहाँ शेर-गाय इकट्ठे जल पीते थे। सत्य, ईमानदारी, वचनबद्धता जैसे मूल्यों के पीछे व्यक्ति स्वयं को मिटाने से भी पीछे नहीं हटता था। रामायण का पाठ आज भी हम घर-घर में करते हैं परन्तु राम में विद्यमान दैवी गुणों को स्वयं में कहाँ धारण कर पाते हैं? भरत के भ्रातृ-प्रेम को आज भी संसार याद करता है परन्तु काश! हम भी उस भ्रातृ-प्रेम को जीवन में उतार पाते तो समस्त संसार के झगड़ों को पल भर में मिटा देते। भरत ने, ज्येष्ठ भ्राता राम को वनवास भुगतता देख स्वयं भी राजमहल के सुख-भोगों को त्याग अयोध्या नगरी के बाहर, गेरुवे वस्त्र धारण कर वैरागी की भाँति जीवन व्यतीत किया। उसकी आँख रत्ती मात्र भी उन भौतिक सुखों में नहीं डूबी जिनका राजा उसकी माँ उसे बनाने वाली थी...।''

अभी मेरी बात अपूर्ण ही थी कि सभा में से आवाज़ आई, 'परन्तु ब्रह्माकुमार जी, भरत जैसे भ्रातृ-प्रेम का आदर्श स्थापन करने अर्थ राम जैसा सदाचारी भाई भी तो चाहिए? कहाँ खरीदें राम जैसे सदाचारी भाई?' सभी की नज़रें उस व्यक्ति की तरफ मुड़ गईं। यह आवाज़ सुनकर पल भर के लिए तो मैं स्तब्ध और निरुत्तर हो गया लेकिन सामने बैठी सभा का ख्याल कर, बाद में समय लेकर, विस्तार से बात करने की सलाह देकर मैंने अपने भाषण को पूर्णता की ओर मोड़ दिया। अभी मैं मंच से उतर ही रहा था कि वह व्यक्ति समीप आकर बड़ी ही दयनीयता से आपबीते महाभारत का बखान मेरे समक्ष करने लगा –

''ब्रह्माकुमार जी, क्षमा चाहूँगा आपसे, आपके गहन ज्ञानयुक्त शंखनाद के बीच मैंने आवाज़ करके बाधा डाली परन्तु आप ही न्याय कीजिये। मात-पिता के हम दो ही पुत्र हैं। बड़ा भाई मुझसे पाँच साल बड़ा है। विधवा माँ ने पाला-पोसा, बड़ा किया। पढ़ाई पढ़ने अर्थ बड़े भाई को हॉस्टल में रखा। मज़दूरी कर, मुझे अपने पास रख पढ़ाती रही और पैसा इकट्ठा करके उसे हॉस्टल में भेजती रही परन्तु वह कुसंग में आकर दिनों-दिन व्यसन, उन्माद, वेश्यावृत्ति की तरफ बढ़ता गया। एक दिन वह भी आया कि हॉस्टल के प्राचार्य ने तंग आ करके घर चिट्ठी लिखी कि अपने बेटे को लेकर जाइये अन्यथा हम पुलिस को सौंप देंगे। चिट्ठी पाकर मेरे और माँ के होश ही उड़ गये। उसे हॉस्टल से लाना क्या था, वह स्वयं ही चलकर घर आया और अब उसका रोज़ाना का धंधा बन गया है माँ से पैसे लेकर

शराब पीना, होटलों में खाना और रात को आकर घर में हंगामा करना। उसके कारण घर बेचकर सड़क पर आना पड़ा, इससे भी उसकी पूर्ति न हुई। एक दिन माँ के पास अठन्नी भी नहीं थी और वह पैसों की मांग कर रहा था। माँ के इंकार करने पर उसने जेब से छुरी निकाली और माँ की गर्दन पर लगाकर बोलने लगा, चल निकाल पैसा, नहीं तो आज इस छुरी की शिकार बन जायेगी। मैं होटल में काम करके आया ही था, यह विचित्र दृश्य देखकर चिल्ला पड़ा। अड़ोस-पड़ोस के लोग एकत्रित हो गये और बड़े भाई को पुलिस के हवाले कर दिया। अपनी ही औलाद का ऐसा आसुरी रूप देखकर माँ ने मन में आत्मघात की ठान ली। जीने से निरस्त तो मैं भी हो चुका था परन्तु माँ को देखकर स्वयं को समझा लेता था। एक दिन माँ ने सल्फास की गोलियाँ खाकर जीवन-लीला समाप्त करने की .....।'' मैंने बीच में ही पूछ डाला, 'क्या माँ ने आत्मघात कर लिया?' उतने में एक बुजुर्ग माता लाठी के सहारे चलते मेरे समीप आकर कहने लगी, 'बेटे, भगवान से मैंने न दौलत माँगी, न धन माँगा। माँगी मौत, इस भीख से भी उसने मुझे वंचित रखा। न जाने कितने जन्मों के पापों का लेखा-जोखा चुका रही हूँ। बेटे, भगवान तुम जैसा बेटा हर माँ को दे या तो निपूती रखे।' फिर उसकी भावनाओं का झरना अश्रुधारा के रूप में फूट पड़ा। वह व्यक्ति बोला, ब्रह्माकुमार जी, यही मेरी माँ है। फिर उसकी आँखें भी बरस पड़ी।

पल-भर के लिए तो मेरे भी मन में समुद्री तूफान-सा विचार प्रवाह चला कि आखिर क्या हासिल किया उस नौजवान ने अपने जीवन में, जिसे जन्मदात्री माँ की क़द्र नहीं, संबंधों की क़द्र नहीं। उसने तो मानव जैसा ऊँचा जन्म पाकर भी अपने को पशु से भी बदतर साबित कर दिया। क्या यही जीवन है? इस तरह तो नाले के कीड़े भी जीते हैं। खैर, ईश्वर पिता के दिये कर्मों के गहन ज्ञान के अनुसार मैंने उन्हें समझाया, '' देखिये, यह सृष्टि रंगमंच है, इसमें हर एक आत्मा अपना-अपना पार्ट अदा कर रही है। न जाने कितने जन्मों से हमारे क्या-क्या संबंध रहे होंगे। न जाने कितने कर्मबंधन हमने बनाये होंगे। उन्हीं कर्मों का हिसाब कहीं हम कटुता के रूप में चुका रहे हैं तो कहीं मिठास के रूप में। मानव स्वयं को भूलकर बाह्य जगत की चकाचौंध में अंधाधुंध दौड़ता नज़र आ रहा है। सही मायने में सुख, शान्ति और संबंधों में मिठास लानी है तो आवश्यकता है स्वयं को टटोलने की। आत्म-अवलोकन करें, आत्मचिंतन करें। गीता में वर्णित राजयोग, वर्तमान घोर धर्मग्लानि के समय शिव पिता स्वयं अवतरित होकर सिखा रहे हैं, उसका अभ्यास करें। राजयोग अर्थात् स्वयं को वास्तविक रूप में जानकर आत्म-स्मृति में स्थित हो उस पार ब्रह्म निवासी परमात्मा शिव से मन व बुद्धि के द्वारा योग लगाकर सर्व संबंधों का रसपान करना। इसी से कर्मबंधन टूटते हैं। अब सृष्टि के परिवर्तन का दौर चल रहा है। आवश्यकता है कि हम स्वयं को बदले।''

इस प्रकार कुछ मार्गदर्शन देकर मैंने उन्हें नजदीकी राजयोग प्रशिक्षण केन्द्र का पता दिया और विदा ली। समय बीतता गया। मेरा पुनः एक कार्यक्रम में उसी स्थान पर जाना हुआ। कार्यक्रम के समापन पर हम निकल ही रहे थे कि मेरे समक्ष एक बुजुर्ग माता व दो तरुण, चेहरे पर मुस्कान लिये, आ खड़े हुए। कहने लगे, भाई जी, पहचाना? हम वही भाई व माताजी हैं जिनको कुछ समय पहले आपने राजयोग सीखने का आग्रह किया था। राजयोग के नियमित अभ्यास और शिव बाबा की दया से आज हमारा परिवार एक हँसती-खेलती फुलवारी है। उस हँसते-खेलते परिवार को देख हमने मन ही मन शिव पिता परमात्मा का धन्यवाद किया और ऐसे प्यारे पिता के प्रति कृतज्ञता की मुस्कान चेहरे पर दौड़ गई। ❖

निश्चय है तो विजय है

• ब्रह्माकुमार सुमेर, बालोतरा

बात सन् 1988 की है तब मैं रिकार्डस द ग्रिनेडियर्स सेन्टर जबलपुर में कंप्यूटर सेक्शन में था। सुबह-शाम ईश्वरीय सेवाकेन्द्र पर जाकर मुरली क्लास करता, ईश्वरीय सेवा करता और दिन-भर लौकिक सेवा अच्छे ढंग से पूरी करता था। अचानक आदेश आए कि कोई भी सैनिक परिसर से बाहर नहीं जायेगा। मन में प्रश्न उठा कि अब प्रात: मुरली क्लास कैसे हो पायेगी। मैंने मन की बात बाबा को कही एवं क्लास में जाना जारी रखा। मेरे अधिकारी ने मुझे अपने कार्यालय में बुलाया एवं सख्त आदेश दिया कि आप बाहर नहीं जायेंगे। मैंने कहा, श्रीमान् जी, मैं उचित स्थान पर जाता हूँ, आप भी मेरे साथ चलकर देखिए। अधिकारी अपने नशे में थे, मुझे बोले, मैं आपको आदेश उल्लंघन करने के मामले में फँसा दूँगा जिससे आपको नौकरी से हाथ धोना पड़ सकता है। मैं शान्त रहा, बाबा को याद करता रहा तथा मन ही मन विचार किया – जिसका ज़िम्मेदार भगवान स्वयं हो, उसे किसी से डरने की क्या ज़रूरत है? फिर अधिकारी ने मुझे मेरी सेवा पर भेज दिया। सेवा-कार्य करते-करते, बाबा ने मुझे टचिंग दी, बच्चे, अधिक न सोचो, मैं आया ही हूँ आपके लिए, आपने ज़िम्मेदारी मुझे दे दी तो फिकर किस बात की? मैं हल्का हो गया एवं सेवा-कार्य करता रहा।

सायंकाल आया, आदेश का उल्लंघन करते हुए मैं बाबा के शिक्षाकेन्द्र पर पहुँच गया। निमित्त बहन को सब कुछ बता दिया। बहन ने कहा, भाई जी, एक-दो दिन मुरली टेलिफोन पर सुन लो, बाद में जब स्थिति सामान्य हो जाये तब निरंतर आना प्रारंभ कर देना। मैंने कहा, ठीक है, परन्तु, मन तो यही कह रहा था, जब मैं सही हूँ तो फिर डरने की ज़रूरत क्यों?

अगली सुबह जब साढे तीन बजे मेरी नींद खुली तो देखा कि भयंकर तूफान और बरसात चल रही थी। प्रात: के कार्य से निवृत्त होकर मैं बाबा के घर की ओर चल पड़ा। क्लास में मेरे अलावा कोई नहीं था। बहन ने कहा, आप पर रोक लगी हुई थी और तूफान भी भयंकर था, फिर भी आप पहुँच गये! मैंने कहा, दीदी, तूफान बाबा ने भेजा ही है मेरे लिए जिससे बाबा का बच्चा अच्छे ढंग से बाबा की मुरली सुन सके। मैंने अच्छे ढंग से क्लास की, मुरली सुनी, मुख्य बिन्दु लिख लिए परन्तु तूफान रुकने का नाम नहीं ले रहा था और मुझे लौकिक सेवा पर भी आना था। मैंने बाबा व दीदी से आज्ञा ली एवं चल पड़ा। रास्ते में अधिकारी का बंगला था। आठ बजे थे, अधिकारी बाहर खड़े थे। मैं सड़क पर चल रहा था, मैंने उनको देखा एवं राम-राम किया। उन्होंने पूछा, आप कहाँ से आ रहे हैं? मैंने कहा, आश्रम से। इसके बाद मैं लौकिक-सेवा पर पहुँच गया।

थोड़ी देर बाद अधिकारी मेरे पास आया। मैं अपनी सीट से खड़ा हो गया एवं उनका अभिवादन किया। कुछ समय के लिए अधिकारी चौंक गया क्योंकि मेरे अलावा ऑफिस में कोई नहीं था। अधिकारी ने तुरन्त मुझसे कहा – I am very sorry dear. Please excuse me. You are really great (मुझे अफसोस है, मुझे क्षमा करें, आप सचमुच महान हैं)। मैंने बाबा को बहुत-बहुत धन्यवाद दिया। मुझे अनुभव हुआ कि बाबा पर अटूट निश्चय है तो सफलता कदम चूमती है। ❖

एकान्त

• ब्रह्माकुमार नरेश, मुजफ्फरनगर

आम भक्त की मनोकामना होती है कि उसे मोक्ष प्राप्त हो जाये। मोक्ष, मुक्ति, निर्वाण या कैवल्य का अर्थ है नितांत एकान्त, यहाँ तक कि संकल्प व चेतना से भी एकांत। तो बिना एकान्त के अभ्यास के उस सर्वोच्च एकान्त (मोक्ष) की प्राप्ति कैसे हो सकती है। आज का व्यक्ति भक्ति करता ही है ऊँची आवाज़ में आकर और घंटी मंजीरा आदि बजा कर। 'रात्रि-जागरण' के नाम पर मोहल्ले भर में जो शोर मचाया जाता है, वह नींद के लिए आवश्यक एकान्त को समाप्त कर, मोहल्लेवासियों के रात भर के मोक्ष का भी हरण कर लेता है अर्थात् मोक्ष (अखण्ड मांगते) मांगते मनुष्य का पुरुषार्थ है शोर मचाने का। इससे तो फिर सांसारिक शोर में पुन: आने का भाग्य तैयार होता है।

ईश्वरीय गोद में मीठे एकान्त का अनुभव

आत्मा को शरीर प्राप्त करने के बाद पहला संस्कार प्राप्त होता है, एकान्त में वास करने का। आत्मा लगभग चार माह के गर्भस्थ अविकसित शरीर में प्रवेश करती है और लगभग पांच मास तक का एकान्तवास करती है। पिछले जन्म के संस्कार स्मृति के रूप में उसके साथ होते हैं और एकान्तवास में मन को खुराक प्रदान करते हैं। मन की चेतना स्मृति की खुराक से ही संकल्प करती है। यदि स्मृति श्रेष्ठ कर्मों की है तो उसे गर्भ का एकान्त कष्टप्रद प्रतीत नहीं होता। गर्भ में रहते उस पर अपनी माता की मन:स्थिति का भी प्रभाव आता रहता है। यदि माता शुभ, श्रेष्ठ संकल्पों में रहती है तो गर्भस्थ शिशु का एकान्तवास भी श्रेष्ठ बन जाता है। जन्म लेने के बाद उसे माता के आंचल में जैसा मीठा एकान्त मिलता है, वैसा उसे फिर पूरे जीवन में नहीं मिल पाता। ऐसा इसलिए क्योंकि शिशु के अपनी माता से सर्व संबंध होते हैं, उसकी माँ उसका संसार होती है। हाँ, एक राजयोगी भी शिव बाबा से सर्व संबंध जोड़ कर फिर उनकी गोद का ऐसा मीठा एकान्त अनुभव करता है, जैसा कि उसे अब तक के जीवन में नहीं मिला होता। **मनुष्यात्मा अपने पूरे जीवनकाल में जब भी थकान दूर करना चाहती है, तब उसे एकान्त (प्रथम संस्कार) में विश्राम करने से ही राहत मिलती है और यदि एकान्त लौकिक संकल्पों की बजाय 'शिव स्मृति' का हो, तो थकान ही दूर नहीं होती बल्कि विकर्म भी दूर होते हैं।**

एकान्त में उदासी क्यों?

आध्यात्मिक साधना में एकान्त का बड़ा महत्त्व है। एकान्त में मनुष्य अपने अंदर झांक कर श्रेष्ठता के स्रोत का अनुभव कर सकता है, उसे जीवन में उतार सकता है। मनुष्यात्मा में जो अनेक मौलिक व दिव्य शक्तियाँ समाई हुई हैं, उनका प्रयोग वह इसलिए नहीं कर पाता क्योंकि जीवन में एकान्त में जाना या रहना सीखा ही नहीं है। वह संग या संगठन में रहने का आदी है। दूसरे शब्दों में, आज मनुष्य सारी दुनिया में देहधारियों के पीछे भागा फिरता है व दैहिक सुख भोगता फिरता है परन्तु उसे अपने अन्दर की अलौकिक दिव्य दुनिया में अतीन्द्रिय सुख भोगने की सुध ही नहीं है। यदि वह कभी एकान्त में होता भी है तो बाह्य जगत की दुखदायी घटनाओं का ही चिन्तन करने बैठ जाता है। ऐसा एकान्त उसे उदासी, विषाद में ले जाकर डिप्रेशन का मरीज़ बना देता है। ज़रूरत है स्वयं के 'शान्त स्वरूप' व 'एकान्त स्वरूप' को जानने, पहचानने व अनुभव करने की।

चेतना-शून्य स्थिति

आत्मा का स्वधर्म यदि शान्ति है तो उसका स्वदेश है परमधाम, मूलवतन या शान्तिधाम, जहाँ वह अन्य आत्माओं के साथ रहते हुए भी नितान्त एकान्त में होती है। इतना एकान्त कि उसे अपने अस्तित्व का भी भान नहीं होता। परन्तु सभी आत्माओं का यह एकान्तवास एक बराबर न होकर कम-ज़्यादा होता है। पृथ्वी पर मनुष्यात्मा एकान्तवास के दौरान विश्राम (निद्रा) में भी हो सकती है या फिर जागृत अवस्था में मनन-चिन्तन, चिन्ता आदि में भी परन्तु शान्तिधाम में तो वह स्वप्नरहित गहन निद्रा जैसी स्थिति में ही होती है। जो आत्मा साकार पृथ्वीलोक पर रहते जितना ज़्यादा अनाचार, पापाचार में रही होती है, वह उतनी ही ज़्यादा

दुर्बल, निढ़ाल पड़ जाती है। ऐसी ऊर्जाविहीन आत्मा को शान्तिधाम में लम्बे समय तक आराम की आवश्यकता होती है ताकि वह पुन: पृथ्वीलोक पर आकर जन्म-मृत्यु-जन्म के चक्र में चलने लायक बन सके। परन्तु विश्राम की इस प्रक्रिया में, उस दौरान पृथ्वी पर चल रहे सतयुग, त्रेतायुग बीत चुके होते हैं इसलिए इसे आत्मा की अच्छी अवस्था नहीं कहा जा सकता। यह तो आई.सी.यू. में चेतनाशून्य स्थिति (coma stage) में पड़े मरीज़ जैसी स्थिति है। जो आत्मायें ऊर्जा के अनन्त स्त्रोत शिव परमात्मा से योगयुक्त होकर पुन: ऊर्जावान बनती हैं, वे सतयुग, त्रेतायुग में पार्ट बजाती हैं।

आत्माओं को कलियुग या कल्प के अंत में, निराकारी लोक (जिसे ब्रह्मलोक, निर्वाणधाम, मुक्तिधाम, परमधाम, मूलवतन, शान्तिधाम आदि भी कहा जाता है) में वापस लौटना होता है परन्तु पावन बनकर। फिर उन्हें साकार लोक पृथ्वी पर पुन: भिन्न-भिन्न पार्ट बजाने अलग-अलग समय पर आना ही होता है, परन्तु शान्त स्वरूप बनकर। पावन या तो परमपिता शिव से योगयुक्त होने के लम्बे अभ्यास से बना जा सकता है या फिर कल्प के अंत में धर्मराज से सज़ा खाकर। अभी कलियुग के इस अंतिम जन्म की अंतिम घड़ियों में जो मनुष्य एकान्तवासी व शान्त बनने का अभ्यास पक्का कर लेता है, उसे फिर परमधाम में एकान्तवास करने की न्यूनतम आवश्यकता होती है।

अशिष्टता दिला रही है विशिष्टता

आज मनुष्य 'लोकप्रिय' तो होना चाहता है परन्तु 'लोग-प्रिय' (सर्व का चहेता) व 'एकान्तप्रिय' नहीं। एकान्त ही ईश्वर के समीप लाकर 'ईश्वरप्रिय' बनाता है। देखा जाये तो ईश्वर की खोज 'चार धाम की यात्रा' से नहीं बल्कि राजयोग की विधि द्वारा 'परम-धाम' की यात्रा' से पूरी होती है। यह संसार कभी श्रेष्ठ चरित्रवान मनुष्यों का 'कर्मधाम' था परन्तु आज यह हड्डी-मांस का 'चर्मधाम' है। यहाँ आज चरित्र व कर्म की पूछ नहीं, बल्कि 'चमड़ी-दमड़ी' के पीछे भागने वाले कामाचारी व्यक्ति की पूछ है। एकान्त अर्थात् 'एक के अन्त' में जाना परन्तु आज का मनुष्य लुभावनी काया के पीछे अन्त तक जाता रहता है। आज अधिकतर अति विशिष्ट व्यक्ति (VIPs) वे हैं जो हमेशा खबरों में बने रहना चाहते हैं। एकान्त क्या है, वे यह जानते ही नहीं और यदि वे लंबे समय तक खबरों से बाहर हो गये तो ब्लड प्रेशर के मरीज़ हो जाते हैं। यह चिन्ता की बात होनी चाहिए कि समाज के ज़िम्मेवार पदों पर बैठे कई व्यक्तियों की अशिष्टता ही उन्हें विशिष्टता दिला रही है।

एकान्त के लाभ

एकान्त के अनेक फायदे हैं। एकान्त ही मनुष्य को उसके स्वधर्म 'शान्ति' में टिकने का मौका देता है। एकान्त में ही मनुष्य 'विचार सागर मंथन' कर एक से बढ़कर एक सुन्दर विचारों का सृजन कर पाता है और **जिसके पास सुन्दर विचार हैं, वह कभी अकेला नहीं रहता।** एकान्त में ही मनुष्य अपने मिथ्याभिमान (vanity) का सुनिश्चित उपचार कर पाता है। एकान्त में मनुष्य समर्थ चिन्तन करके सुख-शान्ति का अनुभव कर सकता है। एकान्त से कल्पनाशक्ति व विवेकशक्ति को बल मिलता है। एकान्त विकट परिस्थितियों से निपटने में मदद करता है और उनका समाधान प्रदान करता है। एकान्त आत्मा को पुष्ट करता है और कर्मों में श्रेष्ठता प्रदान करता है। एकान्त से एकाग्रता व तन्मयता की शक्ति का विकास होता है। एकान्त से गंभीरता, धैर्य, वैराग्यवृत्ति, उपराम स्थिति, दूरदर्शिता और साक्षी दृष्टि आदि गुणों का विकास होता है। परन्तु एकान्त में जाने के लिए अन्तर्मुखता का गुण आवश्यक है। बहिर्मुखी मनुष्य एकान्त का लाभ नहीं ले सकता। एकान्त, मनुष्य-जीवन को पूर्णता प्रदान करता है। जिस मनुष्य ने एकान्त में जाना नहीं सीखा, उसने जीवन पूर्णतया नहीं जीया परन्तु एकान्त का जो सबसे बड़ा फायदा है, वह है परमात्मा के निकट आने का। परमात्मा से बड़ा एकान्तप्रिय कोई है नहीं और जो कोई एकान्त में जाकर उसे याद करता है वह परमात्मा का प्रिय बन जाता है।

(क्रमश:)

नये मेहमान को क्या दे सकेंगे आप ?

• ब्रह्माकुमार गुरदीप, बठिंडा

जब हम किसी मेहमान को अपने घर बुलाते हैं तो सबसे पहले यह सोचते हैं कि उसे इस घर में कोई असुविधा तो नहीं होगी और यदि हमें लगता है कि घर में खान-पान, रहन-सहन, आमोद-प्रमोद और अन्य प्रकार की सुविधायें मेहमान के अनुकूल नहीं हैं तो हम उसे बुलाने का ख्याल छोड़ देते हैं। इसी प्रकार यदि शहर में दंगे-फसाद हो रहे हों, बाढ़ आई हुई हो या किसी भी प्रकार की प्राकृतिक या मानवीय आपदा का प्रकोप हो तो भी हम अपने मित्र-संबंधियों को अवगत कर देते हैं कि कृपया इस शहर में ना आयें। अब विचारणीय बात यह है कि आज इस संसार में जो बच्चे जन्म ले रहे हैं, वे भी तो नये मेहमान ही हैं और उनका आह्वान भी तो हम ही करते हैं। तो हम आह्वान करने वालों को सोचना चाहिए कि आज के इस भौतिक जगत में सभी भय, अशान्ति, दुख, हिंसा, आतंक और तरह-तरह की लाइलाज बीमारियों से आक्रांत हैं; शरीर निर्माण के लिए आवश्यक पाँचों तत्व प्रदूषित हैं; सार्वजनिक स्थलों पर लंबी-लंबी पंक्तियाँ हैं। स्कूलों में दाखिले की और अस्पतालों में दवाइयों और बिस्तरों की समस्या है; सड़कों पर भीड़ और असुरक्षा की समस्या है; बढ़ती महंगाई में पेट भरने की समस्या है, विकारों और व्यसनों के चंगुल में फँसने की समस्या है, तो क्या ऐसे समस्याग्रस्त संसार में हमें इन नये मेहमानों को बुलाना चाहिए? जो पहले से ही इस संसार में मौजूद हैं, उन्हें तो तीन पैर पृथ्वी मुहैया नहीं हो रही है तो क्या नये मेहमानों को बुलाकर हमें भीड़ और बढ़ा लेनी चाहिए? सोचने की बात है कि हम उन नये मेहमानों के शुभचिन्तक हैं या दुश्मन? जिस दुनिया में, पहले से रहने वाले लोग अपने आप को दुखी और फँसे हुए महसूस करते हैं और परमात्मा से मुक्ति की प्रार्थना करते हैं, उस असुरक्षित और प्रदूषित दुनिया में नये बच्चों को फँसाने में क्यों तुले हुए हैं हम?

किसी भी उत्पादन का यह नियम होता है कि यदि उसकी माँग कम हो जाये तो उत्पादन बंद कर दिया जाता है। अब देखा जाये तो बच्चों की माँग न तो सरकार कर रही है और न ही समाज। आज की सरकार और समाज को तो बच्चे कम और पेड़ ज्यादा चाहिए। इसलिए आजकल जगह-जगह लिखा होता है 'पेड़ उगाओ।' कहीं भी यह नहीं लिखा होता कि 'बच्चे बढ़ाओ।' समय की माँग यही है कि हम जितना समय और शक्ति बच्चों की प्राप्ति और उनके पालन-पोषण में लगा रहे हैं, अगर वह समय और शक्ति पहले से मौजूद व्यक्तियों की हालत को अच्छा बनाने में, अपने आप को पवित्र बनाने में और परमात्मा से योगयुक्त होकर संसार में शुभ वायब्रेशन फैलाने में लगायें तो संसार में अवश्य सुख, शान्ति की वृद्धि होगी। मनुष्यात्माओं की संख्या की बजाय उनकी गुणवत्ता बढ़ेगी। अब हम युग परिवर्तन की संधिवेला पर खड़े हैं। यह समय बहुत अमूल्य है। इस समय को हम बच्चों की प्राप्ति की बजाय परमात्मा से प्राप्ति में सफल करें तो आने वाली नई सतयुगी दुनिया में सोलह कला संपूर्ण श्री कृष्ण जैसे बच्चे जन्म लेंगे। ❖

देना ही लेना है। प्यार देंगे तो प्यार और सम्मान देंगे तो सम्मान मिलेगा

ब्र.कु. आत्मप्रकाश, सम्पादक, ज्ञानामृत भवन, शान्तिवन, आबू रोड द्वारा सम्पादन तथा ओमशान्ति प्रिन्टिंग प्रेस, शान्तिवन -307510, आबू रोड में प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के लिए छपवाया। संयुक्त सम्पादिका - ब्र.कु. उर्मिला, शान्तिवन

E-mail : omshantipress@bkivv.org Ph. No. : (02974) - 228125 worldrenewal@bkivv.org